Chapter-5

पंचम अध्याय

≠≠≠≠≠≠≠≠≠≠≠≠

महाकाव्य

:xxxxxxxxx

महाकाव्य तथा वृहद् प्रबन्ध

महाकाव्य प्रबन्ध काव्य का एक भेद है । प्रबंध काव्य उस पद्य-रचना को कहते हैं, जो छंदो बद्ध रूप में किसी कथा का आधार ग्रहण कर आगे बढ़ती है. इस प्रकार की रचना में कथा मुख्यतः प्रारंभ, मध्य और अन्त इन तीन भागों में विभक्त होती है और इसके साथ ही छन्दों का क्रम भी बदला नहीं जा सकता. डॉ० भगीरथ मिश्र इस तथ्य की पुष्टि में कहते हैं " जिस प्रकार से किसी भवन में दीवालें, द्वार किसी क्रम से होते हैं और ईंटे एक के ऊपर एक रखी रहती हैं, सभी मिलाकर भवन की भव्यता निर्माण करते हैं उसी प्रकार प्रबंध काव्य में भी छंदों का क्रम निश्चित होता है और उसे परिवर्तित नहीं किया जा सकता. "[1] इस विवेचन में जैसा हमने निर्देश किया है कि प्रबंध काव्य में रचना कथानक द्वारा ही संगठित होती है. इसमें किसी एक महापुरुष या अनेक महा-पुरुषों को लेकर युगीन पृष्ठभूमि में जीवन की झांकी एक साथ ही उससे संबंधित घटनाओं का वर्णन किया जाता है. कवि या साहित्यकार इस प्रकार की कृतियों में समग्र जीवन के व्यापक चित्र खींचता है. कभी-2 ये प्रबंध किसी महापुरुष के जीवन की एक या कुछ ही घटनाओं की झांकी प्रस्तुत करता है, इस प्रकार प्रबंध काव्य को दो कोटियों में विभाजित किया जा सकता है. महाप्रबन्ध और खण्ड प्रबन्ध. इसके आगे महा-प्रबन्ध को चार कोटियों में रख सकते हैं. 1| पुराण 2| आख्यान 3| चरित और 4| महाकाव्य,[2] जिनकी संक्षिप्त चर्चा यहाँ आवश्यक है ।

पुराण प्रागैतिहासिक घटनाओं को आधार बनाकर किसी महद् उद्देश्य एवं शिक्षा के प्रचार के लिए चमत्कारी घटनाओं से युक्त वृहद् महाप्रबंध होता है. इसमें ईश्वर के एक या अनेक अवतारों अथवा अवतारी पुरुषों, उनकी महिमा सिद्ध करने के लिए दुर्जनों तथा दुर्वृत्तियों की पराजय द्वारा सद्गुणों की प्रतिष्ठा, शंका निवारण द्वारा विभिन्न

आख्यानों का विकास करते हुए दैवी ऐश्वर्य की महत् प्रतिष्ठा, राजाओं और उनके वंशों का विस्तार, एवं अध्याय के अंत में पुराण के अनुकरण का महात्म्य प्रतिष्ठित करना ही रचनाकार का उद्देश्य होता है, इससे यह स्पष्ट है कि पुराण इतिहास एवं काव्य का अत्यन्त विस्तृत मिश्रित स्वरूप है ।

डॉ० मिश्र के अनुसार काल्पनिक या मिश्रित कथानक को आधार बनाकर रची गयी काव्य रचना आख्यान कहलाती है. इसमें यद्यपि पुराण सा कथा में विस्तार नहीं होता परन्तु फिर भी कथानक में मुख्य कथा के साथ-2 गौण कथायें भी चलती हैं इसमें साहित्यकार नायक से संबंधित जीवन वृत्त और घटनाओं का वर्णन अत्यन्त रोचक एवं चमत्कारी ढंग से करता है. तथ्यों को प्रमाणिक बनाने के लिए कभी-कभी ऐतिहासिक स्थानों और नामों का भी समावेश हो सकता है. [3] पुराण और आख्यान की तरह चरित काव्य भी वर्णनात्मक प्रबंध काव्य है जिसमें किसी महापुरुष या वीर व्यक्ति की वीरता और साहस से युक्त घटनाओं का वर्णन के माध्यम से चरित लिखा जाता है । [4]

महाकाव्य प्रबंध का ही एक रूप है, किन्तु उसकी भिन्नता उदात्त उद्देश्य एवं महान कला संयोजन में है जो उसके " महा " विशेषण को सार्थकता प्रदान करता है. महाकाव्य का महत्व भारतीय काव्य परम्परा में अधिक रहा है क्योंकि उसके जीवन की समग्रता के साथ शैली, काव्य चेतना तथा जीवनगत उदात्तता के संयोजन की ओर ध्यान दिया जाता रहा है. अतः सर्वप्रथम महाकाव्य के स्वरूप पर संक्षिप्त विचार किया जा रहा है ।

महाकाव्य का स्वरूप

महाकाव्य के वृहदाकार में जीवन का सर्वांगीन रूप अभिव्यक्त होता है और समस्त मानवता, समाज, संस्कृति, प्रकृति और चरित्र के

विविध प्रकार उसमें दृष्टिगोचर होते हैं. विस्तृत परिधि में महाकाव्य प्रमुख पात्रों के साथ अनेक गौण और सहायक पात्रों के चरित्र का विश्लेषण भी करता है . जो महाकाव्यकार अपने काव्य में मानव की भावनाओं का जितना जटिल, गंभीर, उदात्त, विचारोत्तेजक और सरस वर्णन करता है, वह उतना ही अधिक सफल महाकाव्यकार माना जाता है. अतः महाकाव्य की रचना एक सांस्कृतिक प्रयास है. जिस प्रकार " संस्कृति " का मूल रूप अखंडित रहते हुए भी उसमें युगानुरूप परिवर्तन होते रहते हैं उसी प्रकार महाकाव्य की प्रभुता अखण्ड होते हुए भी उसकी प्रवृत्तियों और परम्पराओं में विकास क्रम निरन्तर गतिमान रहता है. महाकाव्य की गतिशीलता का वर्णन करते हुए दिनकर ने एक स्थल पर लिखा है ...

".... विश्व के महाकाव्य मनुष्यता की प्रगति के मार्ग में मील के पत्थरों के समान होते हैं. वे व्यंजित करते हैं कि मनुष्य किस युग में कहाँ तक प्रगति कर सका है । " 5

संस्कृत के आचार्यों में सबसे पहले भामह ने महाकाव्य का लक्षण निर्धारित किया. इन्होंने रामायण और महाभारत के आदर्शों को सम्मुख रखा था और महाकाव्य के पाँच भेद - सर्गबद्धता, अभिनेयार्थ, आख्यायिका, कथा और अनिबन्ध बताते हुए सर्गबद्ध रचना को ही महाकाव्य कहा है. उनके अनुसार महाकाव्य सर्गबद्ध रचना है जिसका आकार वृहद होता है, कथा के आधार महान् चरित्र होते हैं, अलंकार युक्त शिष्ट भाषा का प्रयोग होता है. उसमें राजदरबार दूत, आक्रमण, युद्ध आदि का सविस्तार वर्णन होना चाहिए. धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चार वर्णों का विधान होना चाहिए. इसमें नायक का अभ्युदय होता है परन्तु अन्य पात्रों का उत्कर्ष दिखाने के लिए नायक का वध वर्जित होता है । 6

आचार्य दण्डी ने महाकाव्य की जो परिभाषा दी है, वह

परवर्ती अधिकांश आचार्यों हेमचन्द्र और विश्वनाथ आदि के लिए पथ-प्रदर्शक बनी. दण्डी ने भामह की परिभाषा में जिन बातों को जोड़ा है उनमें से मुख्य हैं -- नायक का विदग्ध और उदात्त होना, प्रकृति,नगर, उत्सव, विवाह, युद्ध आदि के वर्णन,सर्गों में भिन्न वृत्तों का प्रयोग एवं नाटक संधियों की योजना ।[7] सातवीं शताब्दी के आचार्य रुद्रट ने महाकाव्य पर विचार करते समय संस्कृत के पूर्वनिर्दिष्ट काव्यों के अतिरिक्त प्राकृत और अपभ्रंश के महाकाव्यों को भी समक्ष रखा और महद्, महच्चरित, महती घटना और समग्र जीवन का रसात्मक चित्रण इन चार प्रमुख लक्षणों का निर्देश करते हुए अपने दृष्टिकोण की व्यापकता एवं मौलिकता का परिचय दिया और मंगलाचरण जैसी रूढ़ियों के पालन को अनावश्यक माना ।[8] बारहवीं शती के आचार्य हेमचन्द्र सूरि[9] ने महाकाव्य के लक्षणों को शब्द, अर्थ तथा भाषा के वैचित्र्यों में विभाजित करते हुए युग के सम्पूर्ण चित्रण की ओर संकेत किया है. उन्होंने भामह, दंडी आदि के समय से आते हुए सर्गों में छन्द परिवर्तनों को स्वीकार किया है और एक ही छन्द में रचित " रावण- विजय " और " हरि विजय " जैसे महाकाव्यों को मान्यता दी है ।

पन्द्रहवीं शताब्दी के आचार्य विश्वनाथ ने " साहित्य दर्पण " के अन्तर्गत महाकाव्य के लक्षण विस्तार से दिए हैं .[10] जिनमें पूर्ववर्ती आचार्यों द्वारा प्रस्तुत लक्षणों का समाहार किया गया है. इसमें कथानक की ऐतिहासिकता, नायक का धीरोदात्त गुणों से युक्त होना, महच्चरित तथा महती घटना की ओर संकेत करता है. पुरुषार्थ चतुष्टय का समावेश, खल-निन्दा, सज्जनों का गुण कीर्तन आदि महउद्देश्य का, नाटक संधियों का निर्वाह, कथावस्तु का सर्ग- विभाजन प्रबंध संगठन का तथा इतर बातें जीवन की समग्रता महाकाव्यता की परिचायक हैं. " मेघनाद-बध " की भूमिका में रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने महाकाव्य के लिए महत्चरित्र, महत्कार्य, महदनुष्ठान आदि गुणों को स्वीकार

किया है । [11]

डॉ० श्याम सुन्दरदास ने महाकाव्य के अंतर्गत महद् उद्देश्य, उदात्त आशय, संस्कृति के चित्रण आदि गुणों को आवश्यक माना है [12] जो लगभग पूर्ववर्ती मान्यताओं की भाँति ही है. डॉ० गुलाबराय ने इसे विषय प्रधान काव्य मानकर उपर्युक्त जीवन की उदात्तता की अभिव्यक्ति के साथ जातीय जीवन के चित्रण पर विशेष बल दिया है. [13]

डॉ० गोविन्दराय शर्मा ने महाकाव्य विषयक उपर्युक्त मान्यताओं का ही समावेश अपने एतविषयक विवेचन में किया है. [14] राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने वस्तुवर्णन के साहित्य दर्पण में निर्दिष्ट विषयों तक ही सीमित रहना अनुपयुक्त ठहराकर कथावस्तु के संगठन पर विशेष बल दिया है । [15]

उपर्युक्त विवरण के अंतर्गत महाकाव्य विषयक परिभाषाओं और विवेचनों में महाकाव्य के स्वरूप पर जो प्रकाश पड़ता है उसके आधार पर यह कहा जा सकता है कि उनमें कुछ तो उसके अन्तर्वर्ती अथवा व्यावर्तक विशेषताओं हैं जो उसे सामान्य प्रबंध से महाकाव्य का गौरव प्रदान करते हैं और ये विशेषताएँ हैं उदात्त कथानक, उदात्त चरित्र, महान उद्देश्य और जातीय या सांस्कृतिक जीवन का समग्रता से चित्रण. अंगी रस तथा इतर रसों की योजना वस्तुतः उपर्युक्त तत्वों में ही समाविष्ट हो जाती है. सर्ग और नाटक संधि आदि की व्यवस्था वस्तु संगठन से संबंधित है जो कि शाश्वत तत्व नहीं है. शाश्वत तत्व के रूप में हम प्रबन्ध संगठन को तो ले सकते हैं जिसका तात्पर्य है आधिकारिक कथा के साथ प्रासंगिक कथाओं का समुचित संगुम्फन. [16] डॉ० नगेन्द्र भी अपनी महाकाव्य विषयक व्याख्याओं में औदात्य को महाकाव्य का प्राण मानकर उसमें पाँच प्रकार की उदात्तताओं का सन्निवेश किया है-- उदात्त कथानक, उदात्त कार्य या उद्देश्य, उदात्त चरित्र, उदात्त भाव और उदात्त शैली । [17]

जो कि उपर्युक्त निष्कर्षों से भिन्न नहीं कहा जा सकता ।

पौर्वात्य की तरह पाश्चात्य में भी इस विषय पर बहुत अधिक विचार हुआ है. यद्यपि हमारे देश की विचार पद्धति अधिक प्राचीन और व्यापक है परन्तु संतुलन की दृष्टि के लिए पूर्व और पश्चिम का अध्ययन भी अत्यधिक आवश्यक है. पश्चिम में एपिक को ही महाकाव्य समझा जाता रहा है. " दी बुक ऑफ एपिक " की भूमिका में तो महाकाव्य की परिभाषा ही इसी तथ्य को लक्ष्य करके दी गयी है -- [18]
एपिक प्रधान रूप से उस वीर रस प्रधान कथात्मक काव्य का नाम है जिसमें श्रेष्ठ काव्यों के सभी गुण हों जैसे सुख-दुःख और संयोग वियोग का चित्रण तथा रीति तत्वों एवं कथातत्वों का मिश्रण आदि वर्णित हों और जिसमें सार तत्वों का प्रकृत समन्वय इस कुशलता से किया गया हो कि वह रचना सदा के लिए अमर हो जाय.

अरस्तू कला और साहित्य के क्षेत्र में अनुकरण को महत्व देते हुए महाकाव्य को भी एक प्रकार की अनुकृति ही मानते हैं. वे महाकाव्य के अन्तर्गत महद् चरित्र, आनंद की क्षमता, एक ही छंद का प्रयोग एवं वर्णनात्मकता को आवश्यक मानता है. [19] जो लगभग पूर्ववर्ती मान्यताओं की भाँति ही है. एक बात जो इन्होंने स्वीकारी है वह है विचारतत्व और पद विन्यास की कलात्मकता, सरल और जटिल शैलियों का प्रयुक्त होना एवं यूनीटि (Unity) का पूर्ण निर्वाह नैतिकता पूर्ण एवं दुर्घटना पूर्ण होना है. वस्तुतः अरस्तू ने महाकाव्य के संबंध में यह विचार ट्रेजड़ी की तुलना करते हुए व्यक्त किया है. अरस्तू का नायक सम्बन्धी मत भारतीय आदर्शों के अनुकूल होते हुए भी कुछ अंशों में भिन्न है क्योंकि उसने नायक की दुर्बलताओं को भी प्रश्रय दिया है. इस दिशा में इनका मत " ड्राइडेन के निकट और " तासो " से दूर चला जाता है. ली वसु (Le Bossu) महाकाव्य को छन्दोबद्ध रूपक [20] तो लोर्ड केम्स वीरता पूर्ण कार्यों का उदात्तशैली में किया गया वर्णन मानते हैं. [21] सुप्रसिद्ध समालोचक

सी० एस० बावरा महाकाव्य के अंतर्गत बृहद आकार, महचरित्र, महती घटना एवं आनंद आदि गुणों को आवश्यक मानता है जो लगभग पूर्ववर्ती मान्यताओं की भाँति है।[22]

एबर क्रांबी की महाकाव्य विषयक परिभाषा इस प्रकार है..

" बृहद आकार के कारण ही कोई महाकाव्य नहीं बन सकता. महाकाव्य की शैली ही उसे महाकाव्य बना सकती है और वह शैली कवि की कल्पना, विचारधारा तथा उसकी अभिव्यक्ति से जुड़ी रहती है . इस शैली के काव्य हमें ऐसे लोक में पहुँचा देते हैं जहाँ कुछ भी महत्वहीन और असारगर्भित नहीं रह जाता. महाकाव्य के भीतर एक पुष्ट, स्पष्ट और प्रतीकात्मक उद्‌देश्य होता है जो उसकी गति का आद्यांत संचालन करता है । "[23]

निष्कर्ष :-

अनेक आलोचकों एवं सुप्रसिद्ध कवियों की विभिन्न अवधारणाओं को देखने से प्रतीत होता है कि उन्होंने अपने-अपने मतानुसार एक या एक से अधिक महाकाव्य रचना के तत्वों को प्रधानता दी है. भारतीय और पाश्चात्य दोनों की अवधारणाओं में बृहदाकार महाकाव्य काव्यावर्तक गुण न मानकर उसमें कला, सौष्ठव एवं उद्‌देश्यगत महानता को आवश्यक माना है. सभी परिभाषाओं को दृष्टि में रखते हुए महाकाव्य की एक व्यापक परिभाषा इस प्रकार प्रस्तुत की जा सकती है...

महाकाव्य वह महत् काव्य रूप है जिसमें व्यापक कथानक, महदुद्‌देश्य और महच्चरित चित्रण, विषम आत्मा का उदात्त आशय, सभ्यता और संस्कृति के संघर्ष का दर्पण, गंभीर अभिव्यंजना शैली एवं शिल्प विधि और मानवतावादी दृष्टि से उसका रचयिता युग जीवन के उन्नत बोध को सांस्कृतिक पृष्ठभूमि पर प्रतिफलित करता है । संक्षेप में हम

कह सकते हैं कि महाकाव्य की रचना मानवता के मंगलमय आख्यान और मनुष्यता की चेतना को अंकित करने का एक सांस्कृतिक प्रयास है ।

जैसा कि दृष्टिगत किया जा चुका है कि भारतीय और पाश्चात्य दोनों की एतद्विषयक अवधारणाएँ डॉ० नगेन्द्र द्वारा निर्दिष्ट उदात्त कथानक, उदात्त कार्य या उद्देश्य, उदात्त भाव और शैली आदि अन्तर्वर्ती विशेषताओं के विषय में लगभग एकमत हैं. जहाँ तक इतर विवरणों का विषय है ये युगानुरूप छोड़े या अपनाये जा सकते हैं तथा इसके साथ ही कथावस्तु का सम्यक् संगठन और विभाजन, जीवन का समग्रता के साथ चित्रण आदि भी आवश्यक गुण है, जो उसे अन्य काव्य रूपों की तुलना में विशेष महत्व प्रदान करते हैं और इसीके कारण वह महाकाव्य है ।

आलोच्य युग के महाकाव्य

पूर्ववर्ती अध्याय के विवेचन से स्पष्ट है कि हमारे आलोच्य काल (1920 से 1965) में कई महाकाव्यों की रचना हुई. परन्तु हमारा विषय क्षेत्र हिन्दी के आधुनिक वीर काव्य होने के कारण हम अपने आलोच्य ग्रंथ में इन्हीं महाकाव्यों को स्थान देंगे जो या तो वीर रसात्मक हैं. द्वितीय और तृतीय अध्याय में स्पष्ट किया जा चुका है कि बीसवीं शती के राजनैतिक, आर्थिक, धार्मिक, सांस्कृतिक चेतना तत्कालीन विदेशी आक्रमणों के कारण निर्मित परिस्थितियों ने इस प्रकार की काव्य कृतियों का सृजन का पथप्रशस्त किया. प्रस्तुत अध्याय में केवल कथातत्व, चरित्र चित्रण और रसात्मकता को ही स्थान दिया जायेगा. भाषा-शैली, छंद विधान, अलंकार इत्यादि कला सौष्ठव के पक्षों का अनुशीलन समग्र रूप से अष्टम अध्याय के अन्तर्गत किया जायेगा.

पूर्ववर्ती अध्याय में हिन्दी वीर काव्यों का जो संक्षिप्त परिचय दिया गया है उसके आधार पर"जयभारत ", "कृष्णायन " आकार के

दृष्टिकोण से महाकाव्य जैसे होते हुए भी उनमें वे अन्तर्वर्ती गुण नहीं पाये जाते जिन्हें हम महाकाव्य विषयक अनुशीलन में निर्दिष्ट कर चुके हैं. इन्हें वृहद प्रबंध कहा जा सकता है, जिनपर स्वतंत्र रूप से इसी अध्याय में महाकाव्यों के मूल्यांकन के पश्चात विचार किया जायेगा. वीर काव्यों की कोटि में आनेवाले शेष महाकाव्य इस प्रकार हैं ...

" अंगराज ", " रावण ", " विक्रमादित्य ", " हल्दीघाटी ", " आर्यावर्त ", " जौहर ", " अशोक ", " झांसी की रानी ", " तात्याटोपे ", " छत्रसाल ", " भगतसिंह ".

सामग्री के आधार पर उक्त रचनाएँ दो प्रकार की हैं ....

क. ऐतिहासिक.

ख. पौराणिक.

क. ऐतिहासिक वीर काव्यों के अंतर्गत आने वाले महाकाव्य " विक्रमादित्य " (सन् 1944 ई०), " हल्दीघाटी " (सन् 1939 ई०), " आर्यावर्त " (सन् 1943 ई०), " जौहर " "सन् 1944 ई०), " अशोक " (सन् 1956 ई०), झांसी की रानी " (सन् 1956), तात्याटोपे " (सन् 1957), " छत्रसाल " (सन् 1955 ई०), " भगतसिंह (सन् 1964) हैं.

इन ऐतिहासिक महाकाव्यों का भी इस प्रकार अन्तर्विभाजन किया जा सकता है .....

1. प्राचीन ऐतिहासिक कथानक पर आधारित --
   विक्रमादित्य एवं अशोक महाकाव्य.
2. मध्यकालीन ऐतिहासिक कथानक पर आधारित ---
   हल्दी घाटी, आर्यावर्त, जौहर एवं छत्रसाल.

3. सम सामयिक राष्ट्रीय चेतना से ग्रहीत कथानक पर आधारित..

झाँसी की रानी, तात्याटोपे एवं भगतसिंह.

ख. पौराणिक कथानक पर आधारित महाकाव्य " अंगराज " एवं " रावण " हैं जिसमें " अंगराज " महाभारत पर आधारित है तो " रावण " रामायण पर ।

क. ऐतिहासिक महाकाव्य ::--

वीर रस पूर्ण ऐतिहासिक महाकाव्यों के उपर्युक्त वर्गीकरण से स्पष्ट है कि मध्यकालीन ऐतिहासिक कथानकों तथा घटनाओं पर आधारित महाकाव्यों की संख्या सर्वाधिक है. आधुनिक वीर काव्य के सर्वाधिक यशस्वी कवि श्यामनारायण पाण्डेय के दो सुप्रसिद्ध महाकाव्य " हल्दीघाटी " और " जौहर " इस युग की एक महान देन हैं. उनका नव प्रकाशित " शिवाजी " महाकाव्य भी मध्यकालीन ऐतिहासिक सामग्री पर आधारित है. वीरता की आधार भूत प्रवृत्ति संघर्ष मुहम्मद गोरी के आक्रमण से लेकर पूरे मध्यकाल में परिव्याप्त है. यों देखा जाय तो इस काल खण्ड की की समय-सीमा भी आधुनिक काल की अपेक्षाकृत पर्याप्त विस्तृत है. दूसरे, स्वतंत्रता की रक्षा के लिए दुर्धर्ष युद्धों कीओर साथ ही जन-संघर्ष की एक लम्बी परम्परा मध्यकालीन भारत के इतिहास में दृष्टिगत की जा सकती है. यह हम दिखा आये हैं कि आधुनिक वीर काव्यों के सर्जन में भारतीय जनता की वीर- पूजा की मनोवृत्ति के साथ प्रधानतः ब्रिटिश पराधीनता के युग की राष्ट्रीय चेतना एक सशक्त प्रेरणा बनकर क्रियाशील रही है. इसी राष्ट्रीय चेतना के साथ-साथ सांस्कृतिक जागरण ने कवियों को संघर्षशील अतीत की ओर उन्मुख किया होगा जो कि स्वाभाविक ही हैं. यों भी भारतीय जन मानस परम्परा प्रिय रहा है. युगगत राष्ट्रीय आन्दोलन के संदर्भ में प्राचीन और मध्यकालीन संघर्षों की स्मृति जगा कर जन-साधारण में उत्साह और कर्तव्योत्तेजना का संचार

किया जा सकता है. अतः यह कहा जा सकता है कि ऐसे कवियों ने अपने उक्त दायित्व के निर्वाह का प्रयास किया है. प्राचीन और आधुनिक इतिहास पर आधारित वीर काव्यों की रचना के पीछे यही तथ्य कार्य शील रहा है जिसे इन तीनों प्रकार के महाकाव्यों के विवेचन के अंतर्गत क्रमशः दृष्टिगत करेंगे ।

§1§ प्राचीन ऐतिहासिक कथानक पर आधारित महाकाव्य

यह निर्दिष्ट किया जा चुका है कि प्राचीन इतिहास पर आधारित " विक्रमादित्य " और " अशोक " नामक दो ही वीर रसात्मक महाकाव्य आते हैं. दोनों के नायक और उनकी आधिकारिक कथाएँ ऐतिहासिक हैं. इनमें प्रथम स्वतंत्रतापूर्व तथा द्वितीय स्वतंत्र्योत्तर युग में रचित है. अतः स्वभावतः इनका इतिहास-बोध भी किंचित भिन्न है जिसे प्रसंगानुसार निर्दिष्ट किया जायगा.

कथानक :-

" विक्रमादित्य " महाकाव्य की कथा गुप्त वंशीय शासक चन्द्रगुप्त द्वितीय से सम्बन्धित है जिसने शकों को देश से बहिर्गत करके " विक्रमादित्य " का विरुद धारण किया है.

विक्रमादित्य

ध्रुवदेवी नेपाल नरेश की दुहिता और चन्द्रगुप्त के बड़े भाई राम-गुप्त की विवाहिता पत्नी थी. स्वयंवर के अवसर पर उसने चन्द्रगुप्त को ही वरण किया था किन्तु सम्राट रामगुप्त ने ध्रुवदेवी के पिता पर अनुचित प्रभाव डालकर उसे प्राप्त कर लिया. रामगुप्त अशक्त एवं विलासी था. ध्रुवदेवी चन्द्रगुप्त पर आसक्त थी परन्तु उसको प्राप्त करने के उसके समस्त साधन विफल हो गये. ध्रुवदेवी के प्रणय प्रस्ताव धर्मभीरु चन्द्रगुप्त

द्वारा ठुकरा देने पर उसने रामगुप्त से उसे देश निकाला दिलवा दिया. चन्द्रगुप्त ने भी इसे स्वीकार कर लिया जिसका बाद में ध्रुवदेवी को बड़ा दुःख हुआ. वह देशोद्धार में चन्द्रगुप्त को अपना सहायक बनाना चाहती थी अतः उसने वीर सेन सेवक को संदेश वाहक बनाकर चन्द्रगुप्त को मना लाने के लिए भेजा. इधर क्षत्रप रुद्रसिंह ने शूद्र सेनापति को सूरसेन पति बनाने का लालच देकर मथुरा पर विजय प्राप्त कर ली और रामगुप्त को शैल पर घेरकर ध्रुवदेवी को प्राप्त करने का उपाय सोचने लगा. इसी अन्तराल में वीरसेन और चन्द्रगुप्त बंदी बना लिए गये. बाद में वीर सेन को तो जाने की अनुमति मिल गयी परन्तु चंद्रगुप्त को क्षत्रप रुद्रसिंह की राजकुमारी वीणा के अतिथि के रूप में वहीं रोक लिया गया.

ध्रुवदेवी को इसकी सूचना मिल गयी पर वह बेबस थी. एक ओर क्षत्रप उसे अपनाने का प्रयत्न कर रहा था तो दूसरी ओर उसकी पुत्री वीणा उसके हृदयेश्वर चन्द्रगुप्त पर अधिकार करना चाहती थी. रामगुप्त कायर एवं विलासी था ही , उसने ध्रुवदेवी को क्षत्रप को देने का निंदनीय प्रस्ताव भी स्वीकार कर लिया. ध्रुवदेवी ने इस प्रस्ताव को ठुकरा दिया और स्वयं पत्रवाहक के रूप में चंद्रगुप्त के पास जाकर वस्तुस्थिति से अवगत कराया. चंद्रगुप्त ने क्षत्रप का वध रंगमंच पर अभिनय करते समय मौका पाकर कर दिया. अग्रज रामगुप्त के आने का समाचार सुनकर ध्रुवदेवी को वही सोता छोड़ वन में चला गया जहाँ नदी तट पर विचरण करते हुए उसने कुबेर नागा को नदी में डूबने से बचाया. चंद्रगुप्त के इस प्रकार उसे छोड़कर चले जाने के बाद ध्रुवदेवी योगिनी बन कापालिक की सहयोगिनी बन गयी. कापालिक तंत्र मंत्र द्वारा कुबेर नागा और चंद्रगुप्त का वध करने के लिए अपने साथ ले गया. कापालिक के मंत्रों के सामने चंद्रगुप्त की वीरता काम नहीं आयी पर ध्रुवदेवी ने कापालिक का वधकर दोनों को मुक्त किया और इसके साथ ही चन्द्रगुप्त

से देशोद्धार का व्रत करवा लिया और इस रहस्य को देखकर कुबेरनागा चन्द्र से विदा ले पृथक हो गयी. रामगुप्त की रुग्णता का संदेश पाकर चंद्रगुप्त अग्रज के दर्शनार्थ ध्रुवदेवी के साथ चल पड़ा. रामगुप्त अपने हाथों से अनुज का राजतिलक एवं ध्रुवदेवी को साम्राज्ञी के रूप में उसे सौंपकर चिर निद्रा में सो गया. सम्राट बनने के उपरान्त राजकुमारी कुबेरनागा को जिसका विवाह चंद्रगुप्त की कटार के साथ प्रतिविधि रूप से हो चुका था को भी स्वीकार किया. राजकुमारी वीणा का विवाह वीर सेन के साथ कर दिया और अपनी धवल कीर्ति की पताका चहुँ और फहरा दी ।

समीक्षा

इस ऐतिहासिक महाकाव्य में आधिकारिक कथा के साथ प्रासंगिक कथाओं का सुंदर नियोजन हुआ है. इसका नामकरण भी नायक के आधार पर किया गया है. गुरुभक्त सिंह " भक्त " कृत " विक्रमादित्य " में भारत के राष्ट्रीय गौरव के लिए कटिबद्ध " विक्रमादित्य " की वीरता, साहसपूर्ण तथा नैतिक चरित्र सम्पन्न घटनाओं की बड़ी कुशलता के साथ योजना हुई है जो कि आधुनिक वीर काव्यों की एक उल्लेखनीय विशेषता है. चन्द्रगुप्त और ध्रुवदेवी की आधिकारिक कथा के साथ वीणा, कुबेर नागा, कापालिक आदि से सम्बन्धित घटनाएँ प्रासंगिक हैं जो चन्द्रगुप्त तथा ध्रुवस्वामिनी की चरित्र सृष्टि में सहायक हुई हैं और साथ ही मुख्य कथा को विश्वसनीय और मार्मिक बनाती हैं. कापालिक द्वारा विक्रमादित्य के वध के षड्यन्त्र को विफल करनेवाली ध्रुवस्वामिनी की घटना पूरे प्रसंग को अत्याधिक मार्मिक बना देती है जिसमें शौर्य, साहस और प्रेम का सुंदर सामंजस्य है. ऐसे अनेक प्रसंग हैं जिनमें वस्तु-व्यापार वर्णन की सरसता वर्तमान है. लेखक ने स्वयं स्वीकार किया है कि कथा वस्तु का मुख्य आधार " देवी चन्द्रगुप्त " नाटक है. [24] किन्तु अभिनय करते समय शक क्षत्रप रुद्रसेन का वध तथा ध्रुवस्वामिनी का योगिनी बनना कवि द्वारा कल्पित प्रतीत होता है ।

कथावस्तु की एक उल्लेखनीय विशेषता उसमें वर्तमान राष्ट्रीय-सांस्कृतिक उद्देश्य की उदात्तता की है. इस कृति के द्वारा एक ओर समकालीन जीवन के विविध पक्षों की सुंदर झलक मिलती है, विवाहिता ध्रुवस्वामिनी के प्रणय प्रस्ताव में चंद्रगुप्त की अस्वीकृति नैतिक उदात्तता को उजागर करती है तथा साथ ही साथ शक क्षत्रप को पराभूत करने के प्रयास में नायक और नायिका दोनों के प्रयासों में आधुनिक स्वातंत्र्य चेतना को उद्भासित किया गया है. इसकी तीसरी उल्लेखनीय विशेषता यह है कि इसमें ध्रुवदेवी के माध्यम से प्रेम और शृंगार की चेतना का रंग अवश्य भरा गया है, किन्तु वीरता, साहस एवं कर्तव्य परायणता के सामने वह चेतना दबी हुई है. केवल कापालिक-वध में ही साहस की योजना प्रेम-प्रेरित कही जा सकती है. इतिहास से सिद्ध है कि विदेशी शक्तियों को देश के बहिर्गत करने के स्वतंत्रता संग्राम में सफलीभूत प्राचीन कालीन जन नायकों ने " विक्रमादित्य " का विरुद धारण किया था. अतः विक्रमादित्य नामकरण के पीछे कवि का राष्ट्रीय उद्देश्य ही लक्ष्य किया जा सकता है.

चरित्र चित्रण

विक्रमादित्य की आधिकारिक कथा को विस्तार देने के लिए रामगुप्त, क्षत्रप, रुद्रसिंह, कापालिक आदि की प्रासंगिक कथाये आयीं हैं. चरित्र प्रधान काव्य होने के कारण इस महाकाव्य के वीर चरित्रों में विक्रमादित्य, ध्रुवदेवी और कुबेरनागा के चरित्र उद्घाटित किया गया है.

चन्द्रगुप्त

चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य वीर सेनानी, आत्मसंयमी, दृढ़ विचार शक्ति वाला, मर्यादावादी, सहनशील, गंभीर, साहसी आदि गुणों से विभूषित था. यही नहीं वह शारीरिक सौंदर्य में भी किसी से कम नहीं था. मर्यादावादी होने के कारण रमणी का प्रभाकर्षण उसके मार्ग को

अवरुद्ध न कर सका. वह अपने निश्चय पर अटल था एवं भातृप्रेम में अटूट श्रद्धा रखता था. इसीलिए उसने निर्वासित होना स्वीकार कर लिया किंतु मर्यादा के विरुद्ध कोई कार्य करने को उद्धत न हुआ.

नदी में डूबती हुई कुबेरनागा को बचाकर चन्द्रगुप्त ने अपनी उदारता एवं गुफा में शेर को मारकर अपने विक्रम का परिचय दिया. वह युद्ध विद्या में निपुण एवं अपने बाहुबल पर भरोसा करने वाला था. सहनशीलता एवं उसकी गंभीरता के गुण का पता ध्रुवदेवी की घटनाओं से लगता है. उसपर ध्रुवदेवी ने नाना प्रकार के प्रतिबन्ध लगाये फिर भी वह सदैव उससे बचता रहा. निर्भीक होते हुए भी वह अपने अग्रज के अन्यायपूर्ण अधिकार पर भी हस्तक्षेप करना अपने धर्म के विरुद्ध समझता था. उसका प्रत्यक्ष उदाहरण ध्रुवदेवी का स्वयंवर है जिसमें ध्रुवदेवी को चन्द्रगुप्त ने जीता परन्तु रामगुप्त ने ध्रुवदेवी के पिता पर अनुचित दबाव डालकर अनुज वधू को पत्नी बनाया. इस अनौचित्य पर चन्द्रगुप्त ने किंचित भी आपत्ति न की. भाई के महाप्रयाण पर भाई के इच्छानुसार ही उसने ध्रुवदेवी को पत्नी रूप में स्वीकार किया. यह उसके चरित्र की सामाजिक मर्यादा के प्रति प्रतिबद्धता का द्योतक है.

चन्द्रगुप्त के साहस एवं चारित्रिक बल का परिचय भी महाकाव्य में अनेक प्रसंगों से लगता है. राज्यलिप्सा की गंध उसे छू तक नहीं गयी थी. वीणा एवं कुबेरनागा के साथ रहते हुए भी उसने अपने उज्जवल चरित्र पर कलंक नहीं लगने दिया. यदि वह चाहता तो वीणा और उसके राज्य को स्वयं हस्तगत कर सकता था किन्तु उसके चारित्रिक बल ने उसे ऐसा जघन्य कृत नहीं करने दिया ।

चन्द्रगुप्त एक कुशल शासक था. उसके राज्य में सुख एवं शान्ति का साम्राज्य था. देश में चोर डाकुओं का नामोनिशान न था. सभी सन्मार्ग पर चलते हुए अपने धर्म का पालन करते थे. राष्ट्रीयता की

भावना इसमें भरी हुई थी. इसी भावना से प्रेरित होकर इसमें भारत की बिखरी हुई शक्तियों को एकत्रित किया और विदेशियों को पराजित कर भारत को एक राष्ट्र के रूप में निर्मित किया ।

ध्रुवदेवी
===

ध्रुवदेवी काव्य की नायिका एवं वीरांगना नारी है. देश के उद्धार के लिए युद्धस्थल में भी पहुँचकर अपना अपूर्व योगदान देती है. वह धर्मपरायणता थी. उसने वीर चन्द्रगुप्त को स्वयंवर के अवसर पर अपना हृदयेश्वर बनाया था. यद्यपि रामगुप्त के अनुचित दबाव के कारण उसे रामगुप्त की पत्नी बनना पड़ा परन्तु वह चन्द्रगुप्त को ही अपना एकमात्र जीवन धन मानती थी. उसी जीवन धन को प्राप्त करने में वह अंत में सफल भी हुई. वह दृढ़ व्रती थी और उसका प्रेम एकांगी था. चन्द्रगुप्त के अतिरिक्त उसके हृदय में अन्य किसी के लिए भी स्थान नहीं था. इसका ज्वलन्त उदाहरण कापालिक के प्रसंग में मिलता है.

ध्रुवदेवी नीति निपुणा थी. उसने उस समय चंद्रगुप्त में नवस्फूर्ति उत्पन्न कर दी जब वह जीवन से उदासीन हो चला था. कवि ने चंद्रगुप्त के मुख से उसे अमरलोक की देवी, त्याग एवं अनुराग की मूर्ति कहलाया है. उसमें अत्युक्ति का लेश नहीं क्योंकि जिन परिस्थितियों का सामना उसे आदि से अंत तक करना पड़ा, यदि अन्य कोई नारी होती तो वह अपना अस्तित्व ही समाप्त कर बैठती. वह एक संघर्षशील नारी थी. संघर्ष के बल पर उसने उच्चपद प्राप्त किया.

ध्रुवदेवी त्याग की प्रतिमा थी. चंद्रगुप्त को प्राप्त करने के हेतु उसने राजवैभव एवं सम्मान को तिलांजलि दे दी. यह त्याग देश की रक्षा के लिए था. क्योंकि वह समझती थी कि कायरों द्वारा देश का उद्धार नहीं हो सकता इसीलिए अपने दर्प एवं ओजपूर्ण भाषा में उसने चन्द्रगुप्त का आह्वान किया और भारत माता की लाज बचाने के लिए उसे प्रेरित किया. इस प्रकार प्रस्तुत महाकाव्य में ध्रुवदेवी का चरित्र अत्याधिक

प्रभावशाली बन पड़ा है.

कुबेरनागा

कुबेरनागा चन्द्रगुप्त की वीर पत्नी है. वह अपना पथ स्वयं निर्माण करती है. उसके धर्म को क्रूर के प्रलोभन भी विचलित नहीं कर पाते. अपने सतीत्व की रक्षा के लिए वह प्राणों का मोह तक त्याग देती है और नदी में कूद कर अपने सतीत्व एवं नारी गौरव की रक्षा करती है. वह एक धीर वीरांगना है जब चंद्रगुप्त उसका उद्धार करता है उस समय वह उसे अपना विशेष परिचय नहीं देती और अपने को अनाथ बतलाकर धैर्य से कार्य करती है. अपने साथी पर सिंह का वार होते देखकर चट उसे तलवार के घाट उतार देती है यही नहीं अपने बंदी साथी की मुक्ति के बिना स्वयं को बंधनपाश से मुक्त होना तक स्वीकार नहीं करती. यह वीरोचित गुण उसके अन्तःकरण के निर्मल भावों को प्रकट करते हैं.

कुबेरनागा दृढ़व्रती एवं संयमी है. उसमें विलासिता की भावना लेशमात्र भी नहीं है. ध्रुवस्वामिनी की तुलना में उसका प्रेम अधिक सात्विक है जिस चन्द्र को पाने के लिए ध्रुवदेवी को षडयन्त्र रचने पड़ते हैं उसे कुबेरनागा अनायास ही प्राप्त कर लेती है. उसमें त्याग की भावना भी कूट-कूट कर भरी है. अपने चरित्र की इन्हीं कतिपय विशेषताओं के कारण वह ध्रुवदेवी से भी अधिक महत्वपूर्ण प्रतीत होती है ।

रस :- जैसा कि पूर्वनिर्दिष्ट कथावस्तु से स्पष्ट है कि " विक्रमादित्य " महाकाव्य का अंगी रस वीर है. साथ- साथ श्रृंगार, करुण आदि के चित्र भी दृष्टिगोचर होते हैं. ध्रुवदेवी के माध्यम से प्रेम और श्रृंगार की चेतना का रंग अवश्य भरा गया है परन्तु वीरता, साहस और कर्तव्यपरायणता के सामने श्रृंगार की चेतना दब सी गयी प्रतीत होती है. इसमें युद्धवीर एवं धर्मवीर दोनों रूपों का वर्णन बड़ी सफलता के साथ राष्ट्र प्रेम की चेतना के साथ संयुक्त करके किया गया है.

युद्ध का सजीव वर्णन भी इस काव्य में दृष्टिगोचर होता है. राष्ट्र के प्रति बलिदान की बलवती भावना इस काव्य में उमड़ती प्रतीत होती है, यथा..

" जननी है वही पुकार रही
बलि होने का प्रण करो अटल ।
आओ हम दोनों चलें वीर,
माता की लाज बचा लेवें ।
हो एक जन्म भूषा अखण्ड,
श्रृंगार सहर्ष सजा देवें । " [25]

काव्य में अनेक स्थलों पर वीर रस अपने समस्त अवयवों के साथ प्रस्फुटित हुआ है. इस सम्बन्ध में एक उदाहरण द्रष्टव्य है...

" अरि की रथ सेना कुचल गजों ने,
पग से रज में मिला दिया ।
दांतों से हय दल छेद-छेद,
उनमें भी भगदड़ मचा दिया
जब मार पड़ी तलवारों की,
भालों की भी भरमार हुई ।
छक्के छूट गये कमर टूटी,
अरि के प्रतिकूल बयार हुई । " [26]

यहाँ शत्रु एवं उसका सैन्य दल आलम्बन, चन्द्रगुप्त एवं उनकी सेना आश्रय, अरि की रथ सेना का कुचले जाना एवं उसका धूल में मिलना, हय सेना में भगदड़ मचना, शत्रु सेना के ~~छक्के~~ छक्के छूटना, कमर टूटना और उसके प्रतिकूल वायु का होना आदि उद्दीपन विभाव, चन्द्रगुप्त की गज सेना का शत्रु की रथ सेना को कुचलना, पग से रज में मिलाना, दाँतों से हय दल का छेदना, तलवारों एवं भालों से प्रहार करना, अनुभाव एवं धैर्य, गर्व, हर्ष, उल्लास आदि संचारी भावों से पुष्ट उत्साह स्थायी भाव से

पुष्ट वीर रस का सुन्दर परिपाक है.

अशोक :-

द्वितीय महाकाव्य " अशोक " का कथानक उसके सम्पूर्ण जीवन को समेटे हुए है जिसमें उसकी चरित्रगत निर्बलताओं के साथ उदात्तता और वीरता की प्रभावशाली अभिव्यक्ति हुई है. कथा का प्रारंभ तक्षशिला के कृत्रिम विद्रोह से तथा अन्त आत्मग्लानि में निमग्न अशोक द्वारा बौद्ध धर्म की स्वीकृति के साथ ही हुआ है. युवराज पद की समस्या को लेकर आधिकारिक कथा आगे बढती है. महाराजा बिन्दुसार के ज्येष्ठ पुत्र होने के कारण युवराज पद के अधिकारी अशोक है. कनिष्ठा रानी वासन्तिका के षड्यंत्र उसके स्थान पर कुमार सुसीम को उत्तराधिकारी बनाने के लिए नियोजित किये पात्र है किन्तु अन्ततः अशोक ही उत्तराधिकारी घोषित होता है. इस निर्णय से असंतुष्ट रानी अशोक को तक्षशिला के विद्रोह को दबाने के लिए वहाँ भेजने में सफल होती है और अशोक की हत्या का षड्यन्त्र करती है. इस षड्यन्त्र का भेद तब खुलता है जब अशोक की हत्या के उद्देश्य से उसके शिवर में आये हुए सैनिक बंदी बना लिए जाते हैं. तदुपरान्त अशोक एवं सेनापति देवगुप्त तक्षशिला की जनक्रान्ति को समाप्त करते हैं. इधर वासन्तिका राजाज्ञा द्वारा अशोक की हत्या का असफल यत्न करती है. इधर बिन्दुसार की अचानक मृत्यु होने और अशोक के सुदूर उज्जयिनी में रहने का लाभ उठाकर वह अपने पुत्र सुसीम को सिंहासन पर बिठाती है किन्तु अशोक पाटलीपुत्र आकर सम्पूर्ण षड्यंत्र का उच्छेद कर देता है. इसके उपरान्त माता मल्लिका से पत्नी पद्मा और पुत्र कुणाल के विषय में समाचार नहीं पाते और प्रतिशोध की भावना से अपने समस्त परिवार जनों को मृत्युदंड देते हैं. पद्मा वन-वन भटकते चण्डक नामक योद्धा से मिलती है और उसकी बेटी के रूप में कुछ वर्ष व्यतीत करती है. अशोक पद्मा, कुणाल एवं चण्डक को खोज लाकर

पाटलीपुत्र लाते हैं और चण्डक को सैन्यभार सौंपते हैं. अशोक आचार्य कारुणिक के निर्देशन में यज्ञ करवाते हैं जिनमें आचार्य अनावृष्टि आदि प्रकोपों के प्रतिकार हेतु अग्निकुण्ड में कूद कर अपना बलिदान देते हैं. कारुणिक का पुत्र अशोक को राज्यतिलक लगाता है. शासन भार ग्रहण करने के उपरान्त कलिंग पर आक्रमण करते हैं. घमासान युद्ध के उपरान्त आत्मानुताप के कारण वे सत्य अहिंसा के लिए बौद्ध धर्म स्वीकार कर लेते हैं. इसके उपरान्त वसन्तोत्सव पर कौशम्बी जाते समय तिष्यरक्षिता के लावण्य पर मुग्ध हो विवाह करते हैं जो पुत्र कुणाल पर आशक्त हो जाती है और उस द्वारा इन्कार किये जाने पर उस पर इल्जाम लगाकर आँखे निकलवा देती है. इस षड्यंत्र की वास्तविकता जानने के बाद अशोक अपनी भूल स्वीकार कर अपने पौत्र दशरथ को राज्य सौंप बौद्ध भिक्षुक बन जाते हैं ।

समीक्षा

" अशोक " महाकाव्य की आधिकारिक कथा के साथ वासन्तिका, आचार्य कारुणिक, चण्डक आदि से सम्बन्धित प्रासंगिक कथायें चलती हैं. यदि इस आधिकारिक और प्रासंगिक कथाओं के समीचीन गुंफन की दृष्टि से विचार करें तो यह कहा जा सकता है कि महारानी वासन्तिका के पुत्र को लेकर युवराज पद की जो समस्या पैदा हुई उसका इतिहास में कोई वर्णन नहीं मिलता. बौद्ध परम्परा के अनुसार अशोक को अपने भाइयों से लड़ना पड़ा था और विजयी होने पर उसने उनको बुरी तरह मरवा डाला था परन्तु स्वयं सम्राट ने किसी शिलालेख में इसका वर्णन नहीं किया है. [27] परन्तु इस महाकाव्य में कवि ने पत्नी पद्मा और पुत्र कुणाल के विषय में समाचार न मिलने पर सम्राट अशोक द्वारा प्रतिशोध की ज्वाला में जलकर पूरे परिवार को मृत्यु दण्ड देते दर्शाया है यह कवि की कल्पना ही प्रतीत होती है. वासन्तिका की प्रासंगिक कथा कहानी

को गति प्रदान करने में एवं नायक के चरित्र को उभारने में सहायक प्रतीत होती है. कलिंग का युद्ध जो ई० पू० 261 को हुआ था [28], में हुए हत्याकाण्ड को देखकर बौद्ध धर्म स्वीकारने की कथा को कवि ने इतिहास से ग्रहण किया है. इसी के साथ ही इतिहास प्रसिद्ध घटना नवयौवना अशोक की रानी तिष्यरक्षिता का अशोक के पुत्र कुणाल पर आसक्त होना और उसकी आँखे निकालने का वर्णन कर कवि ने कथा में प्राचीनता एवं नवीनता के संयोग का प्रयास किया है. इस प्रकार कवि ने ऐतिहासिक घटनाओं को सूत्र रूप में स्वीकार कर कथा के विकास में अपनी अद्भुत कल्पनाशक्ति का परिचय दिया है. आचार्य कारुणिक और चण्डक की कथाएँ भी कल्पना प्रसूत लगती हैं.

कथा में मार्मिक स्थलों का भी कवि ने वर्णन किया है. सम्राट का तिष्यरक्षिता के लावण्य पर मुग्ध हो अपनी पुत्री की आयु की इस बालिका से विवाह करना, इसी रानी का अशोक पुत्र कुणाल पर आसक्त होना इत्यादि घटनायें मार्मिक स्थलों का आभास देती हैं. " विक्रमादित्य " की कथा के अनुसार इस की कथा भी राजनीति से विशेष रूप से सम्बद्ध है. अतः इसमें भी कवि ने राजनीति के साथ प्रकृति वर्णनों को भी प्रधानता दी है. सामाजिक जीवन पर अधिक प्रकाश नहीं पड़ता.

यह उल्लेखनीय है कि वीरता, साहस, धैर्य आदि के उदात्त प्रसंगों की योजना अत्यधिक मात्रा में हुई है. अंत में कुणाल के विरुद्ध किये गये षड्यंत्र उसे वैराग्य की ओर मोड़ देते हैं. यह कहा जा सकता है कि कथा का पर्यवसान शान्त रस में होते हुए भी प्रायः सम्पूर्ण काव्य वीर रस पूर्ण वर्णनों, घटनाओं, सशक्त चित्रों से परिपूर्ण है. दूसरा उल्लेखनीय तथ्य यह है कि इनकी रचना स्वतंत्रता- प्राप्ति के पश्चात् हुई है. प्रतीत होता है कि इसका कवि अशोक की चरित्र सृष्टि में महात्मा गांधी के व्यक्तित्व से प्रभावित है. अतः इस दृष्टिकोण से इसे राष्ट्रीय चेतना से प्रेरित नहीं माना जा सकता. फिरभी इसमें

प्राचीन भारत की विजिगीषु वीरवृत्ति का गौरवगान देखा जा सकता है ।

चरित्र-चित्रण

अशोक महाकाव्य का प्रधान पात्र हैं यद्यपि सम्पूर्ण काव्य में अन्यान्य पात्र हैं परन्तु समस्त पात्रों की गतिविधियाँ अशोक के चारित्रिक विकास की संगति हेतु ही प्रस्तुत हुई हैं. अशोक सर्वप्रथम एक आज्ञाकारी पुत्र के रूप में सामने आते हैं जो पिता की आज्ञानुसार राजद्रोह की अग्नि को शान्त करने के लिए जाते हैं.

अशोक अवसरवादी हैं समय पड़ने पर वे समयानुसार अपने को बदल सकते हैं. उज्जयिनी के महाराज से पहले तो युद्ध ठान लेते हैं परन्तु जब सुरुचि आकर उन्हें युद्ध रोकने के लिए कहते हैं तो वे युद्ध रोककर उज्जयिनी पति की कन्या संघमित्रा से विवाह कर लेते हैं. अशोक अत्यधिक क्रोधी एवं प्रतिशोध लेने वाले हैं. उनका यह रूप हमारे सामने तब उपस्थित होता है जब माता मल्लिका से उन्हें पद्मा और कुणाल के विषय में कुछ भी पता नहीं लगता. वे अपने विरोधी समस्त परिवार को मृत्युदण्ड दे देते हैं ।

अशोक में कृतज्ञता का भाव भी है. वे अपनी पत्नी के रक्षक चण्डक को सैन्य भार सौंपते हैं. अशोक वीर, योद्धा, रणनीति से भिज्ञ, कुशल सेनानायक है. वह बड़ी निपुणता से तक्षशिला के विद्रोह को दबाता है तथा सम्राट बनने के उपरान्त विजयी कलिंग देश को भी हराकर अपने राज्य में मिला लेते हैं. वीर योद्धा के अतिरिक्त अशोक में मानवता भी है. वे शीघ्र द्रवित भी हो जाते है. कलिंग युद्ध में हुए नर संहार को देखकर के आत्मानुताप करते हैं और भविष्य में कभी भी युद्ध न करने की प्रतिज्ञा भी करते हैं. अशोक विलासप्रिय भी हैं. वे अपनी भी जल्दी स्वीकार कर लेते हैं और उसका पश्चाताप करने से भी नहीं हिचकिचाते तिष्यरक्षिता से विवाह करने की भूल के कारण वे राज्य को अपने पौत्र

को सौंपकर स्वयं बौद्ध भिक्षुक बन जाते हैं. अशोक कलाप्रेमी भी हैं. वे हर प्रकार के उत्सव इत्यादि में सम्मिलित होते हैं. वसन्तोत्सव में सम्मिलित होना इसका प्रमाण है.

अशोक के अतिरिक्त महारानी वासन्तिका, बिन्दुसार, पद्मा, कुणाल, ससीम, चण्डक आदि पात्र भी महाकाव्य में आये हैं परन्तु इन सब पात्रों का चरित्र सशक्त रूप से चित्रित नहीं हुआ है. कथा को विस्तार देने के लिए ही इन सब चरित्रों को गढ़ा गया है ।

रस:-

प्रस्तुत महाकाव्य प्रमुख रूप से वीर रस प्रधान रचना है. यों तो कवि ने प्रसंगानुसार शृंगार, वात्सल्य, करुण एवं शान्तादि रसों का समावेश भी दक्षता के साथ किया है परन्तु रस परिपाक की दृष्टि से कवि ने विभावानुभाव एवं व्यभिचारी भावों का वर्णन जिस उत्साह के साथ वीर रस में किया है वह अन्य रसों के वर्णन में अलभ्य है. इस काव्य में युद्धवीर के साथ कवि ने इस काव्य में सहिष्णु बलिदानी वीर का चित्र भी प्रस्तुत किया है. कवि बलिदान की भावना की प्रशंसा आचार्य कारुणिक के मुँह से करवाता है....

" आज यह संकट है
राजा पे, प्रजा पे और राष्ट्र पे, समाज पे,
अब कर्तव्य कहता है हमी आज क्यों न
निज बलिदान दें
मानव समाज के हितार्थ स्वार्थगत हो
परिहार जिससे हो देश की विपद का
यह कह करके
कूदे महाचार्य प्रज्ज्वलित अग्निकुण्ड में । " [29]

कलिंग युद्ध के अवसर पर वीर रस का अजस्र प्रवाह प्रवाहित

हुआ है..

" पहले सन-सन सुन पड़ती थी फिर सुन पड़ती थी आह-आह
फिर उड़ते प्राण पखेरू थे मिलती थी मानों खुली राह ।।
भाले रवि किरणों के समान सोख लेते थे जीवन को
अरि के कवचों को भेद-भेद करते थे क्षत विक्षत तन को ।
चर कर तिरछे-तिरछे बरछे थे दिखा मनोकी काट रहे ।
लाखों जीभों से महाकाल मानों शोणित चाट रहे ।। " [30]

यहाँ अशोक और उसकी सेना आश्रय, कलिंग सेना आलम्बन, शत्रुसेना (कलिंग सेना) की तलवारों की सन-सन की आवाज़, उनकी आहें, उनके प्राण पखेरू उड़ना, लाखों जीभों से महाकाल का लहू चाटना आदि उद्दीपन विभाव, रवि किरणों के समान तेज भालों द्वारा कलिंग के सैनिकों के कवच भेदने, उनके शरीर को क्षत विक्षत का प्रयास, बरछे द्वारा शत्रु सेना के अंगों का काटना आदि अनुभाव, धैर्य, गर्व, हर्ष, उल्लास संचारी भाव के कारण वीर रस का परिपाक है, इस प्रकार इसमें वीरता के अंतर्गत युद्धवीर और सहिष्णु बलिदानी वीर दोनों का चित्रण समान सफलता के साथ हुआ है ।

(2) मध्यकालीन ऐतिहासिक कथानकों पर आधारित

यह निर्दिष्ट किया जा चुका है कि मध्यकालीन इतिहास पर आधारित " हल्दी घाटी ", " आर्यावर्त ", " जौहर " एवं " छत्रसाल " नामक चार वीर रसात्मक महाकाव्य आते हैं, चारों के नायक और उनकी आधिकारिक कथाएँ ऐतिहासिक हैं, इनमें से प्रथम तीन स्वतंत्रता पूर्व तथा चतुर्थ स्वातंत्र्योत्तर युग में रचित है, अतः स्वभावतः इनका इतिहास बोध भी किंचित भिन्न है जिसे प्रसंगानुसार निर्दिष्ट किया जायेगा.

विवेचनागत सुविधा के विचार से इन महाकाव्यों पर अलग- अलग विचार किया जा रहा है ।

हल्दीघाटी

कथावस्तु = " हल्दीघाटी " महाकाव्य की कथावस्तु चित्तौड़ नरेश वीर केसरी राणा प्रताप द्वारा स्वातन्त्र्य-चेतना से प्रेरित होकर आजीवन किये गये युद्ध-संघर्षों से सम्बन्धित है. यद्यपि इसका नामकरण हल्दीघाटी के मुख्य युद्ध के आधार पर किया गया है किंतु इस युद्ध के पश्चात् प्रणवीर प्रताप की जय-पराजयों के बीच उनके स्वतंत्रता के लिए किये गये संघर्षों की गौरव गाथा को इसके कवि श्यामनारायण पाण्डेय ने काव्य का विषय बनाया है. अतः प्रतीत होता है कि इसके कारण हल्दीघाटी शब्द इन सभी युद्ध-संघर्षों का एक प्रतीक बन गया है ।

कथा का प्रारंभ विजयदशमी के दिन राणा प्रताप एवं शक्तिसिंह का अन्य लोगों के साथ आखेट के लिए प्रस्थान से होता है. वहाँ एक सिंह का शिकार करते हुए प्रताप और शक्तिसिंह में झगड़ा हो जाता है. यह झगड़ा युद्ध का रूप ले लेता है. राज पुरोहित दोनों भाइयों को लड़ता देखकर बीच बचाव करने का प्रयत्न करता है और जब अनुभव करता है कि उसकी वाणी का प्रभाव नहीं पड़ रहा है तो वह आत्मबलिदान देता है. फलतः दोनों में युद्ध रुक जाता है. राणा प्रताप शक्तिसिंह को वहाँ से चले जाने का आदेश देता है. शक्तिसिंह अकबर के पास चला जाता है. इधर अकबर अपने विश्वस्त सेनापति मानसिंह को शोलापुर जीतने के लिए भेजता है. अकबर अपनी कूटनीति से एक तीर से दो शिकार करने की सोचता है और मानसिंह को आदेश देता है कि वह लौटते समय राणा प्रताप से भी मिलता हुआ आये. शोलापुर जीतने के पश्चात् मानसिंह अपने आगमन

का संदेश राणा प्रताप को भेजता है. राणा को उन सब राजपूतों से घृणा है जिन्होंने अकबर से संबंध स्थापित किये हैं. राणा प्रताप स्वयं मानसिंह का स्वागत करना नहीं चाहता वह अपने पुत्र को यह कार्य सौंपता है. पहले तो मानसिंह स्वागत सत्कार को देखकर बहुत प्रसन्न होते हैं, पर जब भोजन के अवसर पर भी राणा को अनुपस्थित पाकर अपमान का अनुभव करते है और सैन्य शक्ति और पराक्रम की डींगे हांकते हैं, पर इसका प्रताप पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता , वह मानसिंह को धिक्कारता है और उसकी चुनौती स्वीकार करता है ।

मानसिंह अकबर के पास जाकर रोता चिल्लाता है. अकबर जिसे प्रताप की स्वतंत्रता खटकती थी, को भी बहाना मिल जाता है. युद्ध की तैयारियाँ होने लगती हैं. राणा प्रताप भी युद्ध की तैयारी करके हल्दी घाटी की पहाड़ियों में छिपकर मानसिंह की प्रतीक्षा करता है. उन्हीं पहाड़ियों में घूमते हुए मानसिंह को राणा के भील सैनिक बंदी बना लेते हैं पर प्रताप उसे छुड़ा देता है. प्रताप एवं अकबर की सेना में घमासान युद्ध होता है जिसमें प्रताप मानसिंह को खोजता, सेना को चीरता उसके हाथी तक जा पहुँचता है. राणा प्रताप और मानसिंह में घमासान युद्ध होता है. मुगल सैनिक प्रताप को घेर लेते हैं परन्तु स्वामिभक्त झाला राणा प्रताप के मुकुट को अपने मस्तष्क पर रखकर प्रताप के प्राणों की रक्षा करता है. घायल चेतक राणा प्रताप को युद्धभूमि से बचाकर ले उड़ता है परन्तु दो मुगल सैनिक देख कर उसका पीछा करते हैं. अग्रज के पराक्रम का अलौकिक चमत्कार देखकर शक्तिसिंह में भ्रातृप्रेम उदय हो जाता है वह मुगल सैनिकों को मारकर अपना घोड़ा देकर अग्रज को बचाता है. अब राणा प्रताप परिवार सहित अनेक कष्टों को सहते हुए पहाड़ की गुफाओं में रहते थे जहाँ एक दिन कन्या के हाथ से घास की रोटी भी बिलाव छीनकर ले जाता है और पुत्री के रुदन से विचलित होकर राणा को संधी पत्र लिखने बैठते हैं परन्तु महारानी राणा को इस कार्य के लिए रोकती है. भामाशाह

राणा प्रताप को सेना तैयार करने के लिए धन देता है जिससे सेना तैयार कर वह " देवीर " और " कुम्भलगढ़ " के किले विजित कर संसार से प्रयाण करता है ।

समीक्षा

" हल्दीघाटी " महाकाव्य को यदि आधिकारिक अथवा मुख्य कथा के साथ प्रासंगिक कथाओं का समुचित गुंफन के आधार पर विचार किया जाये तो यह स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है कि इसमें कवि ने महाराणा प्रताप और अकबर के साथ युद्ध की आधिकारिक कथा पुरोहित के बलिदान, से संबंधित प्रासंगिक घटना है. आधिकारिक कथा इतिहास प्रसिद्ध हल्दीघाटी के रोमांचकारी युद्ध पर आधारित हैं. यह युद्ध 21 जून, 1576 को हल्दी घाटी में हुआ था. कवि ने इतिहास द्वारा प्रस्तुत इस युद्ध के रेखाचित्र ग्रहण किये हैं. किंवदन्ती के आधार पर कवि ने कथानक का ताना-बाना बुना है और अपनी कल्पना के माध्यम से इसमें सुंदर रंग भरा है. इतिहास के शुष्क कंकाल में कवि ने अपनी सर्जन प्रतिभा द्वारा प्राण रस का संचार किया है. पूर्व परम्परा के प्रति भी कवि की आस्था " नमस्कार " एवं " प्रस्तावना " में दृष्टिगोचर होती है और इसके साथ ही नवीन के ग्रहण में उदार दृष्टि का भी परिचय दिया है.

कथावस्तु की प्रथम उल्लेखनीय विशेषता उसमें वर्तमान राष्ट्रीय सांस्कृतिक उद्देश्य की उदात्तता की है. नायक के माध्यम से कवि ने आधुनिक स्वातंत्र्य चेतना को उद्भाषित किया है. दूसरी उल्लेखनीय विशेषता युद्ध की घटनाओं की प्रचुरता एवं सजीवता की है. युद्ध ऐसे लगते हैं जैसे प्रत्यक्ष हो रहे हों. राणा प्रताप के भाले का शत्रु पर प्रहार करना, चेतक की टाप का वर्णन, युद्ध में राणा की तलवार आदि के वर्णन अत्यधिक प्रभावशाली हैं ।

कथावस्तु की तीसरी विशेषता मार्मिक प्रसंगों की सफलतापूर्वक

अवधारणा की है. पुरोहित के बलिदान द्वारा दोनों भाइयों के द्वन्द्वयुद्ध को रोककर कथा को नवीन मोड़ देना, शक्तिसिंह का भातृप्रेम उमड़ना और दोनों मुगल सैनिकों का वध कर अग्रज को अपना अश्व देकर उसके प्राण बचाना, राणा की पुत्री का घास की रोटी खाना और उसके हाथों से रोटी बिलाव द्वारा छीनी जाना एवं बालिका का तलवार मांगकर शत्रु के नाश के लिए उद्धत होना. कवि ने बालिका के मुँह से तुतली भाषा बुलवाकर कथानक में रोचकता उत्पन्न की है। भामाशाह का अपनी सम्पूर्ण पूंजी प्रताप को भेंट करना एवं चेतक की मृत्यु का अंतिम दृश्य खींचकर राणा का विलाप आदि को कवि ने बड़ी मार्मिकता से दर्शाया है.

कथावस्तु की चौथी विशेषता उसमें भीलों के माध्यम द्वारा वर्तमान जनवादी दृष्टि को उद्भाषित करने की है. इसकी पाँचवी विशेषता स्वामिभक्ति के आदर्शों की सफल प्रतिष्ठा है. झाला एवं चेतक के बलिदान के माध्यम से इसे कवि ने सशक्त रूप में प्रस्तुत किया है. भारतीय संस्कारों को प्रतिष्ठित करने का प्रयत्न भी इसमें है. कवि ने इसके हरे-भरे बाह्याकार को कुछ विदेशी प्रभाव और कुछ युग प्रवृत्ति के अनुकूल काँट छाँट कर एक विशेष रूप रंग दे दिया है. राजनीतिक एवं प्राकृतिक वर्णनों का भी कवि ने बड़ी कुशलता से इसमें समावेश किया है. इस प्रकार जीवन के समग्रतया चित्रण, पारिवारिक, सामाजिक, वंश परम्परा राजनीतिक एवं आर्थिक सभी पक्षों, को बड़ी कुशलता से कथा के माध्यम से उभारने का प्रयत्न किया है. इस प्रकार कृति के सम्यक् अनुशीलन द्वारा हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि इसमें कवि की अपनी मौलिक काव्य चेतना है यह कवि की अध्ययनशीलता, प्रतिभा और कल्पनाशक्ति को प्रभावित करती है.

चरित्र - चित्रण :-

" हल्दीघाटी " चरित्र-चित्रण की दृष्टि से एक सफल महाकाव्य है. इस वीर काव्य में कवि ने महाराणा प्रताप, शक्तिसिंह,

अकबर, मानसिंह, झाला, भामाशाह आदि पात्र हैं. परन्तु प्रमुख पात्रों में महाराणा प्रताप, शक्तिसिंह एवं अकबर के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं.

महाराणा प्रताप

महाराणा प्रताप " हल्दी घाटी " के नायक एवं प्रमुख पात्र हैं. वे स्वतंत्रता दीप की लौ के प्रकाश को अडिग बनाये रखने, उस पर शलभ-रूप से मंडराने तथा उसके लिए शारीरिक, मानसिक और पारिवारिक कष्टों को सहन करनेवाले धर्म रक्षक, दृढ़-प्रतिज्ञ, अनुपम शूरवीर, अत्यन्त पराक्रमी, स्पृहणीय स्वतंत्रता प्रेमी, अपनी आन पर सर्वस्व न्यौछावर करने वाले एक राजपूत वीर हैं ।

राणा प्रताप को मातृभक्ति का रक्षक एवं स्वतंत्रता का पुजारी, आत्म अभिमानी राजपूत है उसकी इस चारित्रिक विशेषता का राजा मान-सिंह के बातों से लगता है...

" स्वतन्त्रता का वीर पुजारी संगर-मतवाला है ।
शत-शत असि के सम्मुख उसका महाकाल भाला है ।।
धन्य-धन्य है राजपूत वह उसका सिर न झुका है ।
अब तक कोई अगर रुका तो केवल वही रुका है ।।
निज प्रताप- बल से प्रताप ने अपनी ज्योति जगा दी ।
हमने तो जो बुझ न सके, कुछ ऐसी आग लगा दी ।। " [31]

प्रताप को अपनी शक्ति का विश्वास है. इसी शक्ति के बल पर तो वह मानसिंह का अपमान करने तक से नहीं हिचकता. यद्यपि उसे पता है कि अकबर की सैन्य शक्ति उससे कई गुना अधिक है तथापि फिर भी वह मान-सिंह से कहता है अगर बघना का शीतल जल पीना चाहते हो तो जाओ और यदि युद्ध के लिए ललकार रहे हो आकर लड़ लेना । [32] प्रताप की

वाणी में भी ओजस्विता है. राजा मानसिंह को अपमानित कर वह अत्याधिक प्रसन्न होता है. अपनी ओजस्वी वाणी में वह सरदारों को कहता है..

" सरदारो मान-अवज्ञा से माँ का गौरव बढ़ गया आज ।"
दबते न किसी से राजपूत अब समझेगा वैरी समाज । । 33

राणा प्रताप धर्म भीरु भी है. मानसिंह के रूष्ट होकर दिल्ली लौट जाने पर प्रताप की यह कमजोरी जाग्रत हो उठती है. वह अपना सारा घर खुदवाकर गंगा जल से धुलवाता है. राणा प्रताप दूरदर्शी भी है. मानसिंह का अपमान करने के उपरांत भी वह जानता है कि वह इस अपमान का बदला लेने वह अवश्य आयेगा और इसीलिए वह अपने सरदारों को युद्ध के लिए तैयार होकर रहने का हुक्म देता है. प्रताप में मानवीय संवेदना की भी कमी नहीं है. जब भील सैनिक मानसिंह को घेरकर बन्दी कर लेते हैं तब राणा प्रताप उसे मुक्त कराते हैं.

हल्दीघाटी के मैदान से जान बचाकर भागना राजपूती आन के विरुद्ध है परन्तु कवि ने राणा को इस दोष से भी मुक्त करवा लिया है क्योंकि उसकी दृष्टि में मेवाड़ की स्वतंत्रता के लिए उसके प्राण मूल्यवान हैं. वह जीवन में मेवाड़ के उद्धार की दृढ़ प्रतिज्ञा करता है.

" पर हाँ, जब तक हाथों में मेरी तलवार बनी है ।
सीने में घुस जाने को भाले की तीव्र अनी है ।।
जब तक नस में शोणित है श्वासों का ताना-बाना,
तब तक अरि-दीप बुझाना है बन-बनकर परवाना ।।
घासों की सूखी रोटी, जब तक सोते का पानी ।
जब तक जननी हित होगी कुर्बानी पर कुर्बानी ।। " 34

इस प्रकार व्यक्ति-चरित्र के साथ सामूहिक चरित्र की अवतारणा भी यहाँ हुई है ।

राणा प्रताप में स्वाभिमान एवं निर्लोभ वृत्ति जैसे गुण भी दृष्टिगोचर होते हैं. यह गुण आखेट की घटना के समय दिखाई देते हैं . यद्यपि राणा एक वीर सेनानी, मेवाड़ रक्षक, मेवाड़ उद्धारक है तथापि वह एक पिता भी है. पुत्री का क्रंदन सुनकर उसमें क्षणिक दुर्बलता उत्पन्न होती है जो अत्यन्त स्वाभाविक है. राणा प्रताप के रूप में कवि ने एक युद्ध वीर की साकार प्रतिमा प्रस्तुत की है ।

शक्तिसिंह

शक्तिसिंह राणा प्रताप का अनुज एवं हल्दीघाटी का दूसरा सबल चरित्र है. उसमें संस्कार और स्वभावगत दर्प है. राणा के साथ आखेट खेलते समय केवल इतना कहने पर कि तुम रुको मैं सिंह को मारता हूँ,शक्ति-सिंह में राजपूती आन जागृत हो जाती है. वह तुरन्त कह उठता है कि " क्यों हटने को कहते हो ? क्या मैं वीर या रणधीर नहीं हूँ ? मैंने क्या बरछी, तीर , भाला चलाना नहीं सीखा है ? अपने भाले का, क्या अहंकार दिखाते हो मैं भी भीषण रण मतवाला हूँ । " [35] पुरोहित की हत्या के पश्चात् वह अपमान सहकर प्रताप के पास नहीं रह सकता इसी-लिए वह अकबर के पास चला जाता है. यहाँ उसमें विवशता-जन्य दुर्बलता है. पर उसके चरित्र में जो पतन यहाँ दिखाई देता है उसका परिहार हल्दी घाटी के युद्ध के पश्चात् हो जाता है. अग्रज प्रताप की अद्भुत वीरता और देशभक्ति देखकर उसमें नैसर्गिक भ्रातृ स्नेह उमड़ आता है, वह भाई के चरणों में मस्तिष्क झुका देता है एवं अपना घोड़ा देकर अग्रज की प्राण रक्षा करता है. शक्तिसिंह क्रोधी भी है उसका क्रोध प्रताप द्वारा देशनिकाला दिये जाने पर लगता है...

" यह भी मन में सोच रहा था, इसका बदला लूँगा मैं ।
क्रोध-हुतासन में आहुति मेवाड़ देश की दूंगा मैं । " [36]

इस प्रकार यहाँ शक्तिसिंह वीर,क्रोधी और अपनी आन पर मिटने वाला शिशोदिया कुल का सपूत है ।

अकबर :-

अकबर मुगल साम्राज्य का एक शक्तिशाली सम्राट है. सभी राजपूत राजाओं को अपने अधीन कर लिया है, केवल प्रताप ही इसका अपवाद है. वह एक सफल राजनीतिज्ञ है. अपनी कूटनीति के कारण वह सम्पूर्ण भारत को झण्डे के नीचे एकत्रित कर लेता है. हिन्दू और मुसलमानों को एक नजर से देखता है और यह उसके चरित्र की विशेषता है ।

अकबर कूटनीतिज्ञ एवं वीर ही नहीं, कामी भी है. किसी सुन्दरी को देखकर उसपर आसक्त हो उठना उसकी कमजोरी है। [37] वह अत्याधिक क्रोधी है. मानसिंह का अपमान सुनकर वह आपे से बाहर हो जाता और वह कह उठता है...

" कहा न रह सकता चुपचाप सह सकता न मान संताप ।
बढ़ा हृदय का मेरे ताप आन रहे, या रहे प्रताप ।।
वीरो । अरि को दो ललकार, उठो, उठा लो भीम कटार ।
घुसा-घुसा अपनी तलवार, कर दो सीने के उस पार ।।
महा- महा भीषण रण ठान ऐ भारत के मुगल पठान ।
रख लो सिंहासन की शान कर दो अब मेवाड़ मसान ।। " [38]

इस प्रकार कवि ने इस महाकाव्य में अकबर को एक वीर, व्यभिचारी, क्रोधान्ध, कुशल राजनीतिज्ञ, राज्य विस्तार का लोलुप के रूप में चित्रित किया है.

रस :- " हल्दीघाटी " महाकाव्य में कवि ने अपनी रस सिद्ध लेखनी द्वारा अनेक रसों की धारा प्रवाहित की है जिसमें वीर, रौद्र, वीभत्स, भयानक, करुण आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय है. वीर रस की धारा तो आदि से अंत तक प्रवाहित होती है. इसलिए वीर इस महाकाव्य का अंगी रस है ।

करुण रस इस महाकाव्य में अनेक स्थलों पर दृष्टिगोचर होता है. पुरोहित के आत्म बलिदान के अवसर पर, राणा प्रताप की कन्या के

विलाप, एवं चेतक की मृत्यु पर इस रस की अजस्रधारा प्रवाहित हुई है. श्रृंगार रस का वर्णन अत्यधिक संक्षिप्त है और यह विशेषकर अकबर के प्रसंग में ही आया है. वीभत्स रस का वर्णन युद्ध भूमि में हुई हत्याओं के चित्रों में मिलता है तो रौद्र युद्ध भूमि में वीरों के प्रयासों में दृष्टिगोचर होता है. हल्दीघाटी के युद्ध के अवसर पर वीर रस दर्शनीय है...

" शर-दण्ड चले, कोदण्ड चले, कर की कटारियाँ तरज उठीं ।
खूनी बरछे भाले चमके, पर्वत पर तोपें गरज उठीं ।।
फर-फर-फर-फर-फर फहर उठा अकबर का अभिमानी निशान ।
बढ़ चला कटक लेकर अपार मद-मस्त द्विरद पर मस्त मान ।।
कोलाहल पर कोलाहल सुन शस्त्रों की सुन झनकार प्रबल ।
मेवाड़ केसरी गरज उठा- सुनकर अरि की तलवार प्रबल ।। "[39]

यहाँ युद्ध और राणा के शौर्य एवं उत्साह का वर्णन दर्शनीय है.

" मेवाड़ केसरी देख रहा, केवल रण का न तमाशा था ।
वह दौड़- दौड़ करता था रण, वह मान रक्त का प्यासा था ।
चढ़ चेतक पर घूम घूम करता सेना रखवाली था ।
ले महा मृत्यु को साथ- साथ, मानों प्रत्यक्ष कपाली था ।। "[40]

इसमें भी वीर रस का अजस्र स्रोत बहा है और मेवाड़ केसरी राणा प्रताप का साहस, शौर्य एवं उत्साह दर्शनीय है. हल्दीघाटी के युद्ध के अवसर पर वीर रस की अवरतधारा प्रवाहित हुई है. संपूर्ण युद्ध वर्णन में मानों वीर रस मूर्तिमान हो उठा है. इस संदर्भ में निम्न पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं..

" रण मत्त लगे बढ़ने आगे सिर काट-काट करवालों से ।
संगर की मही लगी पटने क्षण-क्षण अरिकंठ कपालों से ।। "[41]

यहाँ मुगल सेना आलम्बन, राणा प्रताप की सेना आश्रय, अरि कंठ कपालों

से पटती युद्ध भूमि उद्दीपन, रणमत्त सैनिकों का आगे बढ़ना, अपनी करवालों से शत्रु का सिर काटना अनुभाव, हर्ष, उल्लास औत्सुक्य आदि संचारी भाव, उत्साह स्थायी भाव. इस प्रकार रस के सभी अवयवों का समावेश होने के कारण यहाँ वीर रस का पूर्ण परिपाक हुआ है.

वीरता के भेद प्रथम अध्याय में दिखाये गये हैं उनके प्रकाश में हम काव्य के अंतर्गत राणा प्रताप के युद्धवीर, दानवीर, धर्मवीर, क्षमावीर आदि भ आते हैं. अतः इसमें वीर रस की सर्वांगीण अवतारणा को स्वीकार किया जा सकता है ।

आर्यावर्त

तेरह सर्गों में विभक्त " आर्यावर्त " महाकाव्य की कथा यद्यपि पृथ्वीराज के अंतिम युद्ध और पराजय की कथा है किन्तु कथा प्रत्यक्ष रूप से न कहकर चन्द कवि को सूत्रधार बना उनके मुख से कहलाई गयी है. चंद कवि कथा में वह केन्द्र है जिसके द्वारा कथा के विभिन्न सूत्रों का नियमन और संचालन होता है. इस प्रकार " आर्यावर्त " की कथा यद्यपि चन्द से प्रत्यक्ष रूप में सम्बद्ध दिखाई देती है किन्तु वह पृथ्वीराज के निकट सखा व सामन्त के मुख से एक प्रकार से प्रत्यक्ष दर्शी द्वारा वर्णित कथा है. इस काव्य ग्रंथ में कवि का उद्देश्य राष्ट्रीय सांस्कृतिक मूल्यों की स्थापना का ज्ञान पड़ता है जो कि कवि के निजी वक्तव्य से स्पष्ट है. 42

कथावस्तु -

" आर्यावर्त " काव्य में कवि ने पूर्व पीठिका के रूप में उदास संध्या का वर्णन किया है. भारत की स्वाधीनता के सूर्य को अपने भीतर छिपा लेने वाली यह पहली संध्या थी जिसमें दिल्लीश्वर पृथ्वीराज की पराजय हुई. काव्य के प्रारंभ में ही युद्ध ज्वाला की लपट से बचे हुए दो हताश आर्य योद्धाओं के दर्शन देवी मण्डल में होते हैं. इनमें महाकवि चन्द

तथा दूसरा है राणा समरसी. दोनों ही श्रान्त,क्लान्त और आहत हैं और युद्ध संबंधी वार्तालाप करते हैं. पुनः चन्द महाराज पृथ्वीराज की खोज में युद्धभूमि में जाता है. दूसरे सर्ग में अंतर्ज्वाला से जलता हुआ जयचंद गोरी के दरबार में पहुँचता है और बंदी की दशा में पृथ्वीराज उपस्थित किये जाते हैं. वहाँ जयचन्द को देखते ही मुँह से धिक्कारवाणी निकलती है और गोरी उनकी आँखें निकालने की आज्ञा देता है. यह सुनकर पृथ्वीराज लौह शृंखलाओं को तोड़कर दर्पोक्ति के साथ युद्ध करते हैं. फिर शेर के समान फँसाकर पृथ्वीराज की आँखें फोड़ी जाती हैं और साथ ही भारत का भाग्य फूट जाता है ।

तीसरे सर्ग में कवि चन्द महाराज को ढूंढता युद्धभूमि में जाता है और युद्ध का भयानक एवं हृदयद्रावक दृश्य देखता है एवं समरसी का दाह-संस्कार करता है. चतुर्थ सर्ग में जयचन्द के सुसज्जित और गीत वाद्य से मुखरित मजलिस में वृद्ध चारण भयानक स्वप्न का वर्णन करता है जो जयचन्द की नींद उड़ा देता है. इसमें जयचन्द के आत्मग्लानि का वर्णन है. पांचवे सर्ग में सजी-धजी हस्तिनापुर का वर्णन है. इस सर्ग में ही चन्द अधीर हो अपनी पत्नी को शोकजनक समाचार सुनाता है और पुत्र जल्हन को महाकाव्य पूरा करने का भार सौंपकर निश्चिन्त हो गया. छठे सर्ग में कविरानी महारानी को आर्य जाति के महानाश का समाचार सुनाती है एवं कवि को संदेश पहुँचाती है कि वे अब अपनी वाणी से ज्वाला भड़काएँ और वे स्वयं शत्रुओं से मोर्चा लेंगी. इसके बाद तो दिल्ली में आर्य-सेना की पराजय का हाहाकार मच गया. सातवें सर्ग में महारानी मंत्रियों के साथ मंत्रणा करती है और सभी लोग महारानी की जय जयकार करते हुए राजभक्ति की शपत लेते हैं, फिर कवि चन्द महारानी का पत्र ले जाकर जयचन्द को सुनाया. उसने ग्लानि से गलकर पश्चाताप करते हुए पृथ्वीराज के जीते रहने और अ आँखें फोड़ी जाने का समाचार सुनाकर देश की बेड़ियाँ काटने की प्रतिज्ञा की. कवि चन्द हर्ष-शोक का भाव लिए जब दिल्ली लौटा तब उसे सैनिक शिबिर के रूप में परिणत पाया जहाँ के गुप्तचर का संवाद गोरी तक पहुँचाना एवं पृथ्वीराज को गजनी भेजने का

वर्णन है. नवम सर्ग में महारानी एवं गोरी के युद्ध का वर्णन है इसमें जयचन्द भी घायल होता है. दसवे सर्ग में जयचन्द के पश्चाताप और विफल वाणी का वर्णन है और आर्यभूमि से क्षमा मांगता भवभार से मुक्त हो जाता है. गोरी के भागने और सम्राट का पता न लगने के कारण सभी चिंतित होते हैं. ग्यारहवें सर्ग में कवि चन्द का गजनी जाना, बारहवें में पृथ्वीराज से भेंट एवं गोरी को राजा से शब्दभेदी वाण की कला सीखने का प्रस्ताव तेरवें में तवों का तोड़ना और सुल्तान की मृत्यु के उपरान्त तलवार द्वारा आत्महत्या का वर्णन मिलता है ।

समीक्षा

उपर्युक्त कथा को देखते हुए हम कह सकते हैं कि कथा में कवि ने अनेकानेक प्रासंगिक कथाओं एवं उपाख्यानों की योजना नहीं की. " आर्यावर्त " के कथानक में गति है. वह उद्दाम वेग से चरम घटना की ओर उन्मुख होता है. और तदुपरान्त चरम घटना की अनुगामिनी अन्य घटनाएँ कार्य-व्यापार को अंतिम कार्य की ओर ले जाती हैं. प्रासंगिक कथा के नाम पर केवल जयचन्द के प्रसंग का उल्लेख किया जा सकता है, अन्यथा " आर्यावर्त " की कथा उतार-चढ़ाव से युक्त एवं एकाकी रेखा के रूप में आगे बढ़ती है. उसमें न बहुत अधिक मोड़ हैं, और न प्रासंगिक कथाओं के संश्लेष से कहीं विशेष जटिलता व चमत्कार उत्पन्न हुआ है. इसमें वर्णित अधिकांश घटनाएँ वस्तु रूप हैं. कहीं-2 व्यक्ति चिन्तन और आर्य हिन्दू राष्ट्र की स्थापना के प्रसंगों में काव्य का स्वर कुछ बौद्धिक हो गया है किन्तु ऐसे प्रसंग काव्य में बहुत है कम हैं. अधिकांश घटनाओं का क्षेत्र बहिर्जगत है. आन्तरिक भाव व्यंजना तो बहुत ही कम है,, केवल राष्ट्र हित सम्बन्धी, चिन्तन कहीं-कहीं विभिन्न पात्रों के माध्यम से अभिव्यक्त हुआ है. यह चिन्तन भी व्यक्तिगत न होकर समष्टिगत ही है. " आर्यावर्त " के कवि ने " मदमत हो प्रलय गान " गाने की आकांक्षा से जीवन के रम्य मनोहर मधुर पक्ष को काव्य में स्थान नहीं दिया.

करुणाजनक एवं ओजपूर्ण घटनाओं की ही काव्य में प्रधानता है. इसमें कवि ने संयोगिता को इतिहास से भिन्न विलास की वस्तु के रूप में नहीं दर्शाया है वह सांस्कृतिक चेतना का स्वर फूंकती दृष्टिगोचर होती है. मार्मिक प्रसंगों में पृथ्वीराज की आँखे निकालने, चारण का निर्भय होकर जयचन्द की कायरता का वर्णन करना, पृथ्वीराज का तवे तोड़ना आदि प्रसंग मार्मिक बन पड़े हैं एवं कथावस्तु में नवीनता का संचार करते हैं. राजनीति एवं प्राकृतिक वर्णनों का भी कवि ने बड़ी कुशलता से इसमें समावेश किया है. समग्र रूप से हम कह सकते हैं कि " आर्यावर्त " के कवि ने अपनी कथा में कल्पना, शिल्प योजना का परिचय दिया है.

चरित्र चित्रण

चरित्र चित्रण की दृष्टि से भी " आर्यावर्त " एक सशक्त महाकाव्य है. चरित्रों विशेषताओं को ध्यान में रखते हुए आर्यावर्त के पात्रों को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है....

1. वीरता और राष्ट्रीय भावना से ओतप्रोत चरित्र- चन्द, पृथ्वीराज एवं संयोगिता.
2. जो क्रूर कर्मा हैं- गोरी.
3. कायर और व्यक्तिगत निर्बलता से परिपूर्ण पात्र- जयचन्द.

इन पात्रों का क्रमशः वर्णन किया जा रहा है.

कवि चन्दबरदाई " आर्यावर्त " का सबसे प्रमुख पात्र है और महाकाव्य का नायक कहा जा सकता है. चरितनायक की महानता ही इस महाकाव्य को महाकाव्यत्व की उपलब्धि करा रही है. प्रारंभ से लेकर अंत तक कवि का मित्र, आश्रय में रहने वाला कवि चारण है परन्तु आर्यावर्त के कवि ने चन्द को कवि के रूप में ही नहीं बल्कि महावीर और महाआर्य के रूप में दर्शाया है. चन्द काव्य में सर्वप्रथम पराजित योद्धा के

रूप में हमारे सम्मुख आता है. हमारे हृदय में उसकी दशा को देखकर दया का उदय भी हो सकता है परन्तु कवि ने अपने पात्र को इससे बचा लिया है. " आर्यावर्त " का पराजित प्रधान चरित नायक सदा एक कर्मवीर के रूप में ही हमारे सामने रहा है. उसका सिद्धान्त है..

" कर्महीन आलस का नाम ही तो सुख है
सुखकर देता है विलग कर्तव्य से,
कर्मवीर लाते मारते हैं रिक्त सुख को । " 43

चन्द भग्नदूत के रूप में घर लौटता है. कवि ने यहाँ पर अपने चरित नायक के मन में थोड़ा सा मोह भी दिखाया है, क्योंकि कवि चन्द का महाकाव्य का अंतिम सर्ग लिखना बाकी है और यही मोह उसे चुपचाप घर लौटने को विवश करता है. कवि उसके लौट आने का वर्णन भी बड़ी ओजस्वी और प्रखर वाणी में करता है. " आर्यावर्त " का यह चरित नायक आदि से अन्त तक इस्पात का ही बना रहता है. कल्पना की साकार प्रतिमा कवि चन्द अपने संवेदनशील हृदय का उद्गार प्रकट करता है, तो उसका हृदय जरा सा हिल जाता है, परन्तु करुणा की वह एक नन्हीं सी बूंद रोष की महाज्वाला में तत्काल गिरकर कैसे विलुप्त हो जाती है. उसका पता लगना सहज संभव नहीं. जब वह सजी सजायी दिल्ली को देखता है जो समर विजयी वीरों की आरती उतारने को उद्यत थी तब चन्द अपनी आर्य जननी की पराधीनता की याद में विचलित होता है और तनकर बैठकर राजधानी दिल्ली से कहता है...

" कह दो हे राजलक्ष्मी, फेंक आरती
आगे बढ़ो लेकर कृपाण क्रुद्ध चण्डी सी
त्यागो वह भुवन-विमोहिनी मधुरिमा,
दूर फेंको कंकण, उतार फेंको किंकणी,
धो दो अंगराग यमुना की शान्त धारा में ।

आंचल उतार के कसो माँ, कटि तट में,
कूद पड़ो भूखी/शेर सिंहनी-सी मृग झुण्ड में । " 44

कवि चन्द एक विकट योद्धा भी है. सुभट समरसी ने उसके युद्ध का प्रारंभ में ही एक चित्र खींचा है, जिससे चन्द की महावीरता प्रकट होती है । 45 और यह महावीर की भाँति ही महाराज पृथ्वीराज के साथ ही महाप्रभु का भी यों आलिंगन करता है. कवि चन्द महावीर के रूप में ही नहीं, महाआर्य के रूप में भी चित्रित किया है. " आर्यावर्त " के आर्यों को अपने आर्य होने का जितना गौरव है इससे अधिक गौरव महाकवि चन्द को है. चन्दवरदायी आर्य परम्परा के प्रति गौरव का अनुभव करता हुआ यह मानता है कि आर्य कवि भी बन्दी नहीं हो सकते. 46

चन्दवरदायी पृथ्वीराज को बन्दीखाने से मुक्त करने को तुल गया है, वह मुक्ति चाहे शरीर की हो या आत्मा की. वह शारीरिक मुक्ति राजा को न दिला सका परन्तु अंत में तलवारों से खेलकर आत्मा की मुक्ति तो दिला ही दी. वह पृथ्वीराज का आश्रित, सखा और साथी था फिर भी उसने कठोर आर्यधर्म का पालन किया. उस समय के लिए सुन्दर और महान मित्रधर्म यही था. कवि ने किसी भाँति भी चरित नायक की उज्ज्वलता में करुणा का कहीं भी धब्बा नहीं लगने दिया है. जैसे-जैसे कथा का विस्तार होता गया वैसे-वैसे चन्द के चारित्रिक गुण उभर कर सामने आते गये हैं.

पृथ्वीराज चौहान " आर्यावर्त " का विशिष्ट पात्र है. सर्वप्रथम काव्य में पृथ्वीराज पराजित के रूप में ही हमारे सामने आते हैं. कवि चंद ने युद्धभूमि में महाराज की जो दुर्दशा देखी थी, उसने भग्न धनु खण्ड को खण्ड-2 हुआ जो देखा था, उससे अनुमान लगाया था कि कितना विकराल युद्ध करके वीर केशरी विवश हो निःशस्त्र अवस्था में मारा या पकड़ा गया होगा. पृथ्वीराज प्रबल पराक्रम के प्रतीक थे. उनका अप्रतिम प्रताप

शत्रुओं को भी असह्य था. वे गोरी के दरबार जब लाये गये तब लौह श्रृंखलाओं में जकड़े कविराज और पिंजरबद्ध पञ्चास्य से प्रतीत होते थे.

वे बाहर से जितने विशाल थे. उनका हृदय भी उतना ही विशाल था. यदि वे ऐसे न होते तो गोरी को बार-बार पकड़कर कभी न छोड़ देते. इस प्रकार वे एक दयावीर के रूप में दिखाये गये हैं. [47] वे दयावान ही नहीं धर्यवान भी थे. उनमें ओज एवं दर्प भी कूट-कूट कर भरा था. यह दृश्य उनका गोरी द्वारा आँखे फोड़ते समय सम्मुख आता है. वे इस नीति की निंदा करते सदर्प कहते है...

" साहस हो, खोलो सींकडों का, तलवार दो,
सामने खड़े हो, फिर देखो क्षण भर में
बाजी लौट आती है महान आर्य देश की ।
मान जावें पंच हम पाव भर लोहे को
दे दो शेष निर्णय का भार तलवार को । " [48]

वे केवल एक पराक्रमी योद्धा ही नहीं थे, बल्कि मातृभूमि के परम भक्त भी थे. स्वदेश का प्रेम उनके हृदय में निरंतर हिलोरें लेता रहता था. वे बंदी की अवस्था में जननी जन्मभूमि में दूर होना नहीं चाहते थे. वे चाहते थे कि मातृभूमि की सुन्दरता उनकी आँखों में झूलती रहे. जिस पृथ्वीराज ने कभी भूल कर त्रिभुवननाथ से भी करुणा की भीख नहीं मांगी थी वही मातृभूमि के प्रेम के कारण गोरी से दया की भीख मांगता है कि उसे स्वदेश से दूर न किया जाये. इस प्रकार कवि ने इस महाकाव्य द्वारा पृथ्वीराज के प्रताप, पौरुष, ओज, देश प्रेमी रूप को उभारा है.

" आर्यावर्त " के कवि ने संयोगिता को केवल विलासिनी नायिका न मानकर पुरुषों के समान ही वीरत्व, ओज आदि गुणों से सजाया है. रानी संयोगिता वीरता की साक्षात प्रतिमा की कल्पना प्रसूत पवित्र मूर्ति है. [49] रानी कर्तव्य निष्ठ भी है. कर्तव्य के सामने वह अपने व्यक्तिगत दुःख को भी भूल जाती है ।

महारानी स्पष्टवादिनी भी हैं इसी कारण वे अपने पिता को दुत्कारने, फटकारने और धिक्कारने से नहीं हिचकिचाहट महसूस करतीं.

राष्ट्र प्रेम भी रानी में कूट- कूट कर भरा है. उनका राष्ट्रीय रूप प्रथम मंत्रि मंडल में प्रकट होता है वहाँ वे भारतीयता का मूल्यांकन व्यक्तत्व दिया. उससे उसका चरित्र और निखर पड़ा है. [50] संयोगिता ने सारे युद्ध को " आर्यावर्त " का युद्ध बना दिया. इसके बारे में " आर्यावर्त " के कवि/ने कुशलता से गोरी के मुख से ही प्रशंसा करवायी है..

" हाँ मैं डरता हूँ महारानी के प्रभाव से
देखते ही देखते समस्त आर्य देश का
संगठन करके कमाल किया उसने ।
पृथ्वीराज विफल हुए थे इस यत्न में,
सिहंनी भयानक दिखाई पड़ी सिंह से । " [51]

महारानी के सामने कई बार पृथ्वीराज का प्रश्न उमड़-घुमड़ कर आया, पर वह उसे टालकर राष्ट्रीयता के केन्द्र में ही चली आती है. उसने पतिका बदला लेने के लिए गोरी से युद्ध नहीं किया, वह देश की रक्षा के लिए तलवार उठाकर आगे बढ़ी. कवि ने संयोगिता को महारानी संयोगिता के रूप में नहीं, बल्कि उसे आर्य जननी के रूप में अंकित किया है.

मुहम्मद गोरी

" आर्यावर्त " के कवि ने गोरी जैसे पात्र के चरित्र को भी निर्मल और उज्ज्वल बनाकर काव्य में स्थान दिया है. द्वितीय एवं निर्णायक युद्ध को ठीक पहले आर्यों ने गोरी की सेना को तीन ओर से घेर लिया और भारतेश्वरी का दूत गोरी के शिविर के समीप उपस्थित हो आज्ञा की प्रतीक्षा में ठहरा तो उस समय गोरी ने भी आर्यों की सी धर्मोचित शिष्टता और सभ्यता दिखलायी है. आर्यों की युद्धनीति का आदर्श है

कि दूत आदर का पात्र है. गोरी भी उसे " आदेश " [52] देने को कहकर नम्र और मीठी भाषा का प्रयोग किया है. किसी बड़े का, सम्माननीय व्यक्ति का ही " आदेश " सुना जाता है. एक शत्रु दूसरे शत्रु को आदेश नहीं दे सकता. पर गोरी के मुख से कवि ने नम्रता की अतिशयता करा दी है. गोरी ने भी सारगर्भित उत्तर दूत को दिया है यथा...

" सुन लिया प्रश्न, पर कल रणभूमि में
दूँगा दूत ! उत्तर स्वयं महारानी को । " [53]

इससे दृष्टिगोचर होता है कि उसमें व्यवहार की शिष्टता है. वह युद्ध से बचना नहीं चाहता इसीलिए कितनी मीठी भाषा में दूत को उत्तर देकर विदा करता है. गोरी के चरित्र की महानता उस समय चरम सीमा को पार कर जाती है जब वह हाथी पर चढ़ा युद्धभूमि में रानी के रथ के सामने सहसा आ जाता है. आर्य सेना जीतती है. रानी कुटिल कटाक्ष गोरी पर करती है पर वह एक वीर पुरुष है और जानता है कि वीर पुरुष स्त्री जाति को किस दृष्टि से देखता है.

गोरी पृथ्वीराज का भी आदर करता है और इसीकारण गजनी भेजते समय स्वयं ही महाराज पृथ्वीराज को सूचना देने जाता है. केवल इतिहास प्रसिद्ध आँखे निकालने की घटना ही उसके माथे पर कलंक रूप में दृष्टिगोचर होती है. परन्तु कवि ने गोरी जैसे क्रूर कर्मा पात्र में ऐसे गुण दिखाकर उसके चरित्र को गिरने से बचा लिया है.

जयचन्द

भारतीय इतिहास में भारतीयों की दृष्टि में जयचंद देशद्रोही होने के कारण दूषित दृष्टि से देखे जाते है. गोरी की अपेक्षा जयचन्द देशवासियों की अत्यधिक घृणा का पात्र है. यहाँ तक कि देशद्रोही के रूप में जयचन्द रूढ़ सा हो गया है. अपनी जघन्य प्रतिहिंसा की पूर्ति के लिए

जिस गोरी का साथ देकर जयचन्द देश का दुश्मन बना, वह गोरी भी जयचन्द के प्रति अच्छी भावना नहीं रखता [54] ऐसे विश्वासघाती जयचन्द के हृदय मंथन का कवि ने ऐसा सजीव वर्णन किया है कि उससे कलंक कालिमा पुँछ सी जाती है. जब रानी संयोगिता की ओर से अपना लिखा पत्र लेकर कवि चंद राजा जयचंद के यहाँ जाता है, तब वह अत्यन्त धैर्य पूर्वक पत्र को सुनकर कहता है कि " मैं जानता हूँ जब आर्य भूमि का इतिहास लिखा जायेगा और मेरे इस कृत्य का वर्णन होगा जिसे पढ़कर पाठक युग- युगों तक घृणा से कृत्य से धिक्कारेंगे परन्तु जिस पाप कालिमा को मैंने अपने मुँह पर ईर्ष्या के कारण ही लगाया था उसे मैं अब निज रक्त से धोऊँगा. कवि आप जाकर महारानी से कह दीजिए कि देशद्रोही जयचंद भस्मीभूत हो गया है और उसकी जगह आर्य जयचंद प्रकट हुआ है जो देश की बेड़ियाँ काटने का प्रण करता है. " [55] मरण काल के समय उसका विलाप उसके सारे कलंक को धो देता है.

रस
==

" आर्यावर्त " में हास्य रस को छोड़कर सभी रसों का सुन्दर समावेश किया गया है. सभी रस हँसते खेलते नज़र आते हैं. वीर रस आदि से अंत तक अपनी पूर्णता के साथ व्यक्त हुआ है. श्रृंगार रस भी वीर का अंगीभूत होकर आया है.वीरत्व ,एवं ओज के दृश्य प्रारंभ से अन्त तक नजर आते हैं. प्रथम सर्ग में ही वीर सरसी की ओजपूर्ण वाणी सुनाई देती है और वे भवतारिणी देवी से आर्यभूमि में जन्म लेकर ऋण उतारने का ही वर माँगते हैं । [56]

महारज पृथ्वीराज जब गोरी के सम्मुख सीखचों में लाये गये और उनकी आँखे फोड़ने का हुक्म हुआ तो वे किस धीरता और वीरता से युद्ध करते हैं इसका सजीव चित्र कवि ने यहाँ खींचा है...

एक बार पीसकर दाँत महायोद्धा ने
मारा झटका तो छिन्न-भिन्न होके श्रृंखला

× × ×

चित्रवत् सेना घेरे चारों ओर थी खड़ी
घूमता था दिल्लीपति बीच में मृगेन्द्र सा ।
जिस ओर आगे बढ़ता था रौद्र तेज से
विधु काँप जाती, भगदड़ मच जाती थी । " 57

निर्णायक युद्ध में भी कवि ने समर भूमि का सजीव चित्र उपस्थित किया है. यथा....

" गूंजता था घोर टंकार भीम धन्वा का,
सन-सन बाण उड़ते थे नभो देश में
अग्नि की कड़ाएँ उड़ती जब वर्म से,
टक्कर खा टूक-टूक होती तलवार भी ।

× × ×

रथ पर बैठी भारतेश्वरी थी रण में,
रण- चण्डिका-सी, ले धनुष निज कर में,
कौन था समर्थ ऐसा वीर अरि दल में
टिक पाता जो लिए शीश एक क्षण भी । " 58

इसके अतिरिक्त इस महाकाव्य में वीर रस के अन्य पक्ष ओज, धैर्य, गर्व भरी वाणी आदि भी यत्र-तत्र मिल जाते हैं. बलिदान होने के लिए उत्साह भी इस काव्य में प्रचुर मात्रा में मिलता है. उग्र राष्ट्रीयता का रूप भी इस काव्य में दृष्टिगोचर होता है. सप्तम सर्ग में यह राष्ट्रीयता अपनी पूर्णता पर है । 59

इस महाकाव्य में वीर के अतिरिक्त अन्य रस भी दिखाई देते हैं. इसमें श्रृंगार रस रस बरसाता नहीं है, बस उसमें फुहियाँ भर पड़ जाती हैं. कविरानी के माध्यम से ये दृष्टिगोचर होता है एवं जिस दिन गोरी के दुर्ग में गजराज पर सवार होकर प्रतापी पृथ्वीराज गये उस समय भी यह

दिखाई देता है ।[60] " आर्यावर्त " में एक ही स्थान पर शान्त रस ने अपनी झलक दिखाई है और वह है जयचंद की मृत्यु पर कवि की शोकाक्ति. आर्यावर्त का अद्भुत रस सचमुच अद्भुत है. मन-मन भर के लोहे के सात तवे एक बाण मारकर पृथ्वीराज के तोड़ देने की चर्चा के साथ-साथ यह जन रव भी खूब फैला था कि काफिरों के देश में मोतियों की फसल, वृक्षों पर लाल और पन्ने फलते हैं, सोने के पहाड़, भूमि मखमल की एवं बच्चे हीरों की गोलियाँ बनाकर खेलते हैं, दूध, मधु एवं घी की नदियाँ, ठोर, मेवे, दूध मधु खाते एवं पीते हैं, पानी तो केवल मरने वालों को दिया जाता है, बच्चे शेरनी के दूध पीते बच्चों को छीन लेते है. सुनने वालों को यद्यपि ये सब बातें अद्भुत प्रतीत होती है किन्तु कवि ने अपनी मातृभूमि के सुख सौ-भाग्य का सुंदर चित्र खींचा है. " करुण रस " भी अपनी छटा बिखराये नजर आता है. गोरी के कारागार में पृथ्वीराज की दयनीय दशा का दृश्य करुण रस का ही ~~दृढ़~~ उदाहरण है.

निष्कर्ष

" आर्यावर्त " केवल अतीत का चित्र मात्र ही हमारे सामने उपस्थित नहीं करता, बल्कि भविष्य का भी एक ज्वालामय रूप उसमें से फूट पड़ता है. कवि ने " समरसी " के चितानल से आर्यवीरों के प्रकट होने की जो कामना की है, वे वीर जल के शीतल कण न होकर आग की चिनगारियों के रूप में ही होंगे. इस प्रकार चरित्र नायक की दृष्टि से भी यह एक वीर रस का सशक्त महाकाव्य कहा जा सकता है.

जौहर

श्यामनारायण पाण्डेय का यह दूसरा महाकाव्य है जिस कारण इन्हें काफी प्रसिद्धि मिली थी. यह एक नायिका प्रधान प्रबन्ध रचना है. जिसमें कवि ने इसकी कथावस्तु को इक्कीस सर्गों में विभाजित किया है जिन्हें चिनगारियाँ नाम दिया गया है. रानी पद्मिनी के रूप सौन्दर्य से आकर्षित

होकर खिलजी ने वीरसू चित्तौड़ पर चढ़ाई की एवं रावल रत्नसिंह को धोखे से कैद कर लिया. पद्मिनी रावल की मुक्ति में देर होते देख स्वयं रणचण्डी बनना चाहती हैं. रानी की ललकार को सुनकर गोरा बादल नामक वीर सामने आते हैं और कूटनीति द्वारा रावल को अलाउद्दीन के कारागार से मुक्त करवा लेते हैं किन्तु गोरा मुगलों के युद्ध में काम आ जाता है. खिलजी की रानी को पाने की आकांक्षा समाप्त नहीं होती, इस कारण वह पूरे पराक्रम से चित्तौड़ पर फिर आक्रमण कर देता है. राजपूत-वीरांगनाएँ जौहर की ज्वाला में जल जाती हैं और प्रत्येक राजपूत वीर शरीर में उस राख को लगाकर युद्ध की प्रतिज्ञा करता है एवं अंतिम सांस तक लड़ता रहता है. खिलजी- विजयी अवश्य होता है किंतु उसकी विजय सौ- सौ हार से भी ज्यादा बुरी है ।

" जौहर " महाकाव्य को यदि आधिकारिक अथवा मुख्य कथा के साथ प्रासंगिक कथाओं का समुचित गुंफन के आधार पर विचार किया जाये तो यह दृष्टिगोचर होता है कि इसमें रानी पद्मिनी की ऐतिहासिक कथा के साथ राणा लक्ष्मण सिंह का स्वप्न, अधिष्ठाती देवी का राज रक्त मांगना एवं रावल का आखेट खेलते समय वन देवी द्वारा शाप ग्रस्त होना आदि प्रासंगिक कथाओं के आधार पर कथा को विस्तार एवं सरसता प्रदान की गयी है ।

" जौहर " में कथानक की प्रथम विशेषता युद्ध की घटनाओं की प्रचुरता एवं सजीवता है. खिलजी के साथ हुए तीन-तीन युद्धों का इसमें वर्णन है.

दूसरी प्रमुख विशेषता मार्मिक प्रसंगों की प्रतिष्ठा की है जिसमें कवि पूर्णतः सफल हुआ है. रानी की सुंदरता का वर्णन, खिलजी का रानी की प्रतीक्षा में सजना एवं व्याकुल होना, गोरा की वीरता और बलिदान एवं जौहर आदि प्रसंग हैं.

कथानक की तीसरी विशेषता विदेशियों से बहिर्गत करने के स्वतंत्रता संग्राम में फलीभूत मध्यकालीन जननायकों द्वारा राष्ट्रीयता के दर्शन भी कराये हैं. चौथी विशेषता राजनैतिक एवं प्राकृतिक वर्णन का काव्य में कौशलता से दर्शाना है. इस कथान की पांचवी विशेषता भारतीयता का आदर्श प्रस्तुत करने की है. कृति के सम्यक अनुशीलन द्वारा हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि कवि की मौलिक काव्य चेतना उसकी अध्ययनशीलता, सामंजस्यमयी, सारग्राही प्रतिभा तथा कल्पनाशक्ति ही उभर कर सामने आयी है ।

चरित्र चित्रण

चरित्रों की विशेषता को ध्यान में रखते हुए " जौहर " के पात्रों को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है.

1. वीरता से ओत प्रोत चरित्र- रत्नसेन, पद्मिनी एवं गोरा बादल.
2. क्रूर कर्मा चरित्र- अलाउद्दीन खिलजी.

यहाँ पात्रों का क्रमशः वर्णन किया जा रहा है...

<u>रत्नसिंह</u> रावल वंशीय रत्नसिंह चित्तौड़ के अंतिम शासक हैं. इनका व्यक्तित्व आकर्षक है और ये मृगया के अत्याधिक शौकीन है. वह दृढ़ प्रतिज्ञ है वह अपनी रानी से जौहरव्रत में देर होने के कारण व्याकुल होता है कि कहीं प्रतिज्ञा भंग न हो जाये. 61

स्वाभिमान की रावल में कमी नहीं है वह अपनी राजपूती आन को किसी भी हालत में नहीं मिटने देता इसीलिए कहता है कि मेरे मरने से पहले अभिमान नहीं कर सकता और मिटने से पहले सम्मान नहीं मिट सकता । 61 वह एक वीर योद्धा, युद्ध कौशल में निपुण है उसे अपने प्राणों तक का कोई मोह नहीं है. अपनी आन के लिए प्राण गंवाना उसके

लिए खेल मात्र है. शत्रु ने धोखे से तो एक बार उसे कैद कर लिया था परन्तु युद्ध के मैदान में उस वीर को पकड़ना आसान नहीं है. युद्ध भूमि में अपनी वीरता, रणकुशलता का परिचय देता है.

पद्मिनी

पद्मिनी काव्य की नायिका है एवं समस्त घटनाएँ इसी के वृत्ताकार घूमती प्रतीत होती हैं. रानी अत्यधिक सुंदर है और उसके सौन्दर्य की खबर पाकर खिलजी जैसा राहु ग्रसने के लिए आ जाता है.

रानी की वाणी में ओज एवं पौरुष है. रावल की मुक्ति में विलम्ब होने के कारण वह नागिन की तरह फुंकारें भरती है और सैनिकों में शौर्य अपनी वाणी द्वारा जगाती है...

" ललकार रहा वैरी-दल तुम रण विचार में डूबे ।
तलवार शीश पर लटकी, तुम बाँध रहे मनसूबे ।।
x x x
क्यों दूध कलंकित करते, क्षत्राणी के सीने का ।
बोलो तो रूप यही है, क्षत्रिय-जन के जीने का '
धिक्कार तुम्हारे बल को ! धिक्कार रवानी को है !
अरि गरज रहा सीने पर, धिक्कार जवानी को है ! " 63

रानी अत्याधिक चतुर एवं दूरदर्शी भी है. वह जानती है कि अगर अरि धोखे से रावल को बंदी बना सकता है तो हमें भी चतुराई से ही उसे मुक्त कराना होगा. अपनी दूरदर्शिता और चतुराई के बल पर वह अपने पति को खिलजी के कारागार से मुक्त करा लेती है. यही नहीं शत्रु को हराकर भी वह निश्चिन्त नहीं होती, बल्कि रात दिन उसके आक्रमण की प्रतिक्षा करती है. वह पति के मुँह से उसकी पशुता और निर्दयता के बारे में सुन चुकी थी. वह जानती थी कि एक न एक दिन अलाउद्दीन

आक्रमण करेगा जो चित्तौड़ की नींव तक को हिला देगा और रानी की यह शंका निर्मूल नहीं होती ।

रानी दृढ़प्रतिज्ञ है वह जिस बात की प्रतिज्ञा कर लेती है उसे पूरा करके ही दम लेती है. वह पतिव्रता है. रावल ही उसका आराध्य है उसी के साथ उसका जीवन है. उसके बिना वह क्षणभर भी नहीं रह सकती. वह चाहती तो अलाउद्दीन के हरम की शोभा बन सकती थी, परन्तु उसने जौहर व्रत का पालन करना उचित समझा. इसके अतिरिक्त रानी एक वीर क्षत्राणी है जो समय पड़ने पर रणचण्डी भी बन सकती है. उसका यह रूप रत्नसिंह के कैद होने पर सामने आता है. [64]

गोरा बादल

गोरा और बादल चित्तौड़ गढ़ के दो बालक वीर हैं. दोनों ही अत्याधिक तेजस्वी एवं वीरत्व से परिपूर्ण हैं. गोरा अपनी वीरता का व्याख्यान रानी से करता कहता है..

" तू अपने पतिव्रत तेज से शत्रुओं को भस्म कर सकती है, सिंह वाहिनी की तरह शत्रु-असुर को पैरों के नीचे दबाकर चूर कर सकती है और अपनी वरद भुजाओं के बल से रावल रतन को मुक्त कर सकती है, इसमें संदेह नहीं, किन्तु गोरा की तलवार की कब परीक्षा होगी ' माँ गोरा का अदम्य उत्साह एवं दुर्दमनीय साहस किस दिन काम आयेगा." [65]

गोरा बादल की वीरता का पता खिलजी के युद्ध के समय लगता है. दोनों के युद्ध के पैंतरों को देखकर अरि सेनानी भी घबरा जाते हैं. [66.]

गोरा वीर ही नहीं वाक्पटु भी है. वह जब डोलियाँ लेकर खिलजी के पड़ाव के पास पहुँचता है तो वहीं उसके निकट जाकर कहता है..
" लोक सुन्दरी हमारी महारानी, जो इस समय आपके हाथों में है,

निकाह होने से पूर्व अपने पति रावल रतनसिंह से एक घड़ी तक मिल लेना चाहती है, मुझे पूर्ण विश्वास है कि आप उसके अन्तिम मिलन की उत्सुकता का आदर करेंगे । " 67

गोरा एक कुशल सेनानायक भी है. उसके अस्त्रशस्त्र संचालन को देखकर शत्रु भी आश्चर्य चकित हो जाते हैं. उनके पैर युद्ध भूमि से उखड़ जाते हैं. मरते मरते भी वह अपने स्वाभिमान पर मर मिटने का संदेश दे जाता है..

" वीरों, अपने देश के गौरव पर, अपनी जाति के सम्मान पर, कुल वधुओं पतिव्रत पर और स्वाभिमान पर मर मिटो ! वीरो, धर्म के ऊपर बलि हो जाना जन्म सिद्ध अधिकार है । " 68

वास्तव में गोरा एक वीर योद्धा, कुशल शास्त्र संचालक, दृढ़ प्रतिज्ञ, देश और जाति के गौरव पर मर मिटने वाला, धर्म पर बलि चढ़ाने वाला ऐसा पतंगा था जिसने शत्रु सेना के दांत खट्टे कर दिये. अकेला ही शत्रु का मुकाबला करता रहा पर डर कर पीठ नहीं दिखाई ।

अलाउद्दीन खिलजी

जैसा कि प्रारंभ में निर्दिष्ट किया जा चुका है कि अलाउद्दीन पूर्ववर्ती पात्रों से भिन्न क्रूर कर्मा चरित्र है. जलाउद्दीन खिलजी का भतीजा है और अपने इसी चाचा को मारकर सिंहासन पर बैठा. वह एक धीर वीर धर्मान्ध है. सबसे बड़ी उसकी चारित्रिक कमजोरी कामुकता की है. उसने अपना हरम कितनी ही सुन्दर ललनाओं से भरा हुआ है. जब वह चित्तौड़ की रानी पद्मिनी की सुंदरता की खबर सुनता है तो उसे पाने के लिए चित्तौड़ पर चढ़ाई कर राजा रतनसिंह को धोखे से कैद कर लेता है. वह अत्यन्त विलासी भी है जिसका पता उसके डेरे के वर्णन से लगता है । 69

रानी के आने की खबर पाकर वह सजधज कर तैयार हो जाता है, बार-बार पानी से मुँह धोता है, सुरभित तेल लगाकर गले में मुक्तामाला पहनता है परन्तु जब दर्पण में देखता है तो दर्पण भी उसका उपहास करता प्रतीत होता है । " [70] परन्तु फिर भी खिलाज से दाढ़ी केश रंग कर तैयार हो जाता है और रानी की राह देखता है. चित्तौड़ के कहारों से दिल्ली के सम्राट अलाउद्दीन का हारना कम अपमान की बात नहीं है, अब तो उसके लिए यही उचित था कि वह पद्मिनी के नाम से भागता, किन्तु उस रूप लालची कामुक दानव की इच्छा दिनप्रतिदिन बलवती होती गयी ।

खिलजी में अहंकार कूट-कूट कर भरा हुआ है. जब दरबारी कहता है कि रानी क्षत्रिय वीरों की रक्षिता है वह आसानी से नहीं मिल सकती. वह रामचन्द्र की सीता, रामायण की गीता है वह आग में कूद प्राण दे सकती है परन्तु आपके हाथ नहीं आ सकती. यह सुनकर खिलजी का अहंकार आहत होता है. वह दरबारी को फटकारता हुआ अपने पौरुष का बखान करता है...

" चाहूँ तो मैं अभी मृत्यु के लिए मृत्यु संदेश सुना दूँ ।
महाकाल के लिए, कहो तो, फाँसी का आदेश सुना दूँ ।।
अभी हवा को भी दौड़कर धर लूँ, धरकर मार गिराऊँ ।
पर्वत-सिन्धु-सहित पृथ्वी को अपने कर पर आज उठाऊँ ।।
अभी आग की देह जला दूँ, पानी में भी आग लगा दूँ ।
अभी चाँद सूरज को नभ से क्षण में तोड़ यहाँ पर ला दूँ ।।

× × ×

दिनकर-कर से हिम बरसाऊँ हिम कर से अंगार चुवाऊँ ।
अभी कहो तो एक फूंक से बड़वानल की आग बुझाऊँ ।।

खिलजी अत्यधिक कठोर और नृशंस है. उसका नाम लेकर माताएँ

अपने रोते हुए बच्चों को चुप कराती हैं. उसके फाटकों पर खून चूते हुए कटे सिर टंगे रहते हैं, तड़प-तड़प कर किसी को मरते देख उसे बड़ा आनंद मिलता है. वह किसी भी जंगली हिंस्त्र जन्तु से अधिक खूंखार है. उसके वस्त्रों पर खून के दाग लगे रहते हैं. इन सबके अतिरिक्त उसके चरित्र का अच्छा गुण उसका दृढ़ प्रतिज्ञ होना है. यद्यपि उसे चित्तौड़ के रणबांकुरों से हार खानी पड़ी तो भी उसका मन टूटा नहीं. उसने सामन्तों के सामने प्रतिज्ञा की कि चित्तौड़ को ध्वंस किये बिना मैं जीते जी दिल्ली में पैर नहीं रखूंगा और राजपूतों के खून से नहाये बिना जो कोई लौटेगा उसकी बोटी-बोटी काटकर कुत्तों को डाल दूंगा और सचमुच उसने यही कर दिखाया.

वह एक वीर योद्धा, रण नीतिज्ञ है उसकी वाणी में ओज है और वह युद्धभूमि में अपने वीरों में पौरुष का संचार करता है. [72]

रस
==

" जौहर " नायिका प्रधान काव्य है. स्वयं कवि ने इसे वीर-करुण रस सिक्त अद्वितीय महाकाव्य की संज्ञा दी है. इसमें राजपूत वीरों की युद्धगाथाओं में वीर रस भरा हुआ है. युद्ध वर्णन सजीव एवं मार्मिक हैं ऐसा प्रतीत होता है कि सामने ही युद्ध हो रहा हो. इन युद्धों के वर्णन में वीर रस की अजस्त्र धारा प्रवाहित हो रही है. जब चित्तौड़ी पर अधिकार जमाकर खिलजी चित्तौड़ पर आक्रमण करता है उस समय व्यक्तिगत वीरता के साथ सामूहिक वीरता के दर्शन होते हैं. ..

" दोनों ओर प्रहारों से क्षण क्षण पिटने लगे बली ।
तलवारों के वारों से क्षण क्षण मिटने लगे बली ।।

युद्ध में अतुल पराक्रम के साथ-साथ विपरीत परिस्थितियों में भी वीर रस प्रवाहित हुआ लगता है. गोरा की वीरता का वर्णन इसका

प्रत्यक्ष उदाहरण हैं...

" कभी रक्त से तर हो जाता, खूनी शेर बबर हो जाता ।
भैरव प्रलयंकर हो जाता, दन्ती दल भर-भर हो जाता ।।" 74

इस महाकाव्य में वीर दर्पपूर्ण उक्तियों की भी भरमार है. रावल के बंदी होने का संवाद सुनकर रानी राज दरबार में आती है और अपनी वाणी में उत्साह भरकर वीर दर्पपूर्ण उक्ति में दरबारियों को संबोधित करती है. कवि ने रानी के तेजस्वी रूप का उद्घाटन इन्हीं दर्पपूर्ण उक्तियों के माध्यम से किया है । यथा...

" उच्छवास सर्पिणी-सी ले,
लेकर कर में खंजर कर ।
बोली- वाणी-वाणी में
दावानल की ज्वाला भर ।। " 75

इस महाकाव्य में वीर रस के विविध पक्ष यथा युद्धवीर, कर्मवीर, बलिदानी वीर आदि का वर्णन प्रचुरता में मिलता है. व्यक्तिगत वीरता भी अनेक स्थलों में पायी जाती है. युद्ध में अतुल पराक्रम से शत्रु सेना का नाश करते हुए रत्नसेन की वीरता का वर्णन कवि ने अत्यन्त मार्मिक ढ़ंग से किया है. यहाँ शास्त्रीय दृष्टि से वीर रस का परिपाक हुआ है..

" तो भी रुख करता जिधर वीर
काई-सी सेना फट जाती ।
धर दबा दिया जिस वैरी को
तन से कटि अलग छटक जाती ।।
आँखे निकालकर लाल-लाल,
वह जिसे देखता था कराल ।

वह साहस बल खो जाता था,
निर्जीव वहीं सो जाता था । " 76

यहाँ खिलजी की सेना आलम्बन, रत्नसेन आश्रय, सेना का काई के समान फट जाना, तन से कटि का छिटक कर अलग होना, शत्रु का साहस बल खोना, तथा उनका निर्जीव होकर सो जाना आदि उद्दीपन, रत्नसेन का शत्रु सेना की ओर रुख करना, वैरी को धर दबाना, लाल-लाल आँखे निकाल कर देखना अनुभाव, गर्व धैर्य, हर्ष, औत्सुक्य आदि संचारी भावों से पुष्ट स्थायी भाव उत्साह से वीर रस का पूर्ण परिपाक हुआ है ।

निष्कर्ष :-

निष्कर्षत: हम कह सकते हैं कि " जौहर " महाकाव्य वीर रसात्मक महाकाव्य है और उसमें वीर रस के विविध रूप पूर्णता के साथ दृष्टिगोचर होते हैं. महारानी पद्मिनी का बलिदान एक साधारण बलिदान नहीं यह तो राष्ट्रीयता से सम्बद्धित है इसी के बलिदान ने प्रताप, शिवाजी जैसे वीर पैदा किये. यह वह बलिदान से जिससे प्रेरणा पाकर भारतीय नारियों ने संसार के सम्मुख एक नया उदाहरण प्रस्तुत किया. संसार के इतिहास में आत्म बलिदान का ऐसा उदाहरण मिलना अति ही दुर्लभ है. यह भारत का ही गौरविन्त इतिहास है जिसमें इस प्रकार की बलिदानी वीर स्त्रियाँ हुई हैं.

छत्रसाल

लालधर त्रिपाठी " प्रवासी " विरचित " छत्रसाल " महाकाव्य की कथा बुंदेला वीर छत्रसाल की है जिसने शिवाजी की तरह बुंदेल खण्ड को मुगलों से स्वतंत्र कराया था. प्रस्तुत काव्य की कथा का आरम्भ छत्रसाल की, शिवाजी से मिलने जाने वाली, यात्रा से होता है ।

भीमा के तट पर दोनों ऐतिहासिक वीरों का मिलन होता है, छत्रसाल अपनी पीड़ा का वर्णन शिवाजी से करते हैं और कहते हैं कि यद्यपि मैंने देवगढ़ मुगलों को जीतकर दिया किन्तु औरंगजेब ने मेरा उचित सम्मान नहीं किया , और वे शिवाजी से गुरु मंत्र लेकर बुंदेलखण्ड को स्वतंत्र कराने की प्रतिज्ञा करते हैं, " मोर की पहाड़ी " पर जाकर छत्रसाल बुंदेल वीरों को मुगलों के विरुद्ध लड़ने के लिए तैयार करते हैं और उनमें उत्साह भरते हैं. " शुभकरण " में शुभकरण बुंदेला वीर में भी देश प्रेम की भावना जगाई क्योंकि उसकी वीरता को सुनकर मुगलों ने उसे अपनी ओर मिला लिया था. परन्तु उनकी क्रूरताओं को देखकर वह मन ही मन डरता था. अंत में वह मुगलों के विरुद्ध युद्ध छेड़ कर अपने देश को स्वतंत्र कराने के लिए छत्रसाल को निमंत्रण देते हैं और प्रतिज्ञा करते हैं कि वे मिलकर मुगलों को खदेड़ेंगे । " विजय " खण्ड में कुँवरसेन धंधेरा को " " सकरहटी " के दुर्ग में हराकर अपना मित्र बना लेता हैं जहाँ छत्रसाल उसकी पुत्री को देखकर आसक्त होते हैं परन्तु अपनी इस भावना को छिपा लेते हैं. " स्वप्न " में धंधेरा की बेटी छत्रसाल से विवाह के स्वप्न देखती है और जिसकी पूर्ति " विवाह " अंक में जाकर होती है.

" संगठन " अंक में छत्रसाल गोविन्दराय, कुँवरनारायण, अंगद, बलदिवान, कुमारंगद, मेघराज, किशोरीलाल, भानुभट, लच्दे रावत, सुन्दरवन, फतेह वीरों को मिलाकर साम्राज्यवाद का मूल उखाड़कर रामराज्य का डंका बजाना चाहता हैं. छत्रसाल के छत्र के नीचे सभी राजपूत , मराठे, बंगाली आदि इक्के हो गये और " मैहर " विटक युद्ध में सेनापति माधवसिंह को हराकर अपने ओर मिला लिया. मुगलों से युद्ध के समय " विक्रम सिंह " को हराकर उसे भी छत्रसाल ने गले लगा लिया और योग्य मानकर उसे सेनापति बना दिया. इसी प्रकार सूबेदार मनौवर खाँ को हराकर ग्वालियर का दुर्ग विजयी किया और जनता को उस राक्षस से त्राण दिला दिया. औरंगजेब ने रनडूला के नेतृत्व में विशाल मुगल वाहिनी छत्रसाल को दबाने के लिए भेजी. " लाल कवि " में

छत्रसाल के सैनिकों के उत्साह का वर्णन किया है एवं " रनदूला पलायन " में मुगल सेनापति रनदूला का हारकर भागना दृष्टिगोचर होता है. " शरद " में विजय का उल्लास एवं दिल्लीपति के छत्रसाल के भय से कांपने का वर्णन है. " प्राणनाथ " खण्ड में प्राणनाथ योगी से छत्रसाल के मिलने का वर्णन है एवं उनसे आशीर्वाद मिलना भी कवि ने दर्शाया है. जब मिलसे का गढ़ जीतकर बुंदेली सेना विजय मनाकर लौट रही थी तब रास्ते में अनवर खां ने बुंदेली सेना को घेर लिया. अनवर खां एवं छत्रसाल में घमासान युद्ध होता है. जिसमें अनवर युद्ध सामग्री के साथ सवा लाख रूपये देकर औरंगजेब के पास वापिस आये परन्तु औरंगजेब ने क्रोध में आकर उसकी सरदारी छीन अपमानित किया. वह भी छत्रसाल की छत्रछाया में आ गया. " औरंगजेब " खंड में औरंगजेब का घबराना, " सन्देश " में सदरूद्दीन के साथ युद्ध होता है जिसमें मुगल सेना को फिर शिकस्त का मुँह देखना पड़ता है. इस प्रकार बुंदेला सरदार सुख शान्ति का राज्य कायम करता है.

समीक्षा

इस ऐतिहासिक महाकाव्य की आधिकारिक कथा छत्रसाल की है जिसके साथ आधिकारिक कथा के साथ कुँवरसेन, धंधेरा, प्राणनाथ, रनदूलत, सदरुद्दीन आदि से संबंधित घटनाएँ प्रासंगिक हैं जो छत्रसाल की चरित्र सृष्टि में सहायक हुई हैं और साथ ही मुख्य कथा को विश्वसनीय एवं मार्मिक बनाती है. कवि ने स्वयं स्वीकार किया है कि " संवत् 1727 में इन्हीं की शूरता के बल मुगल सेना ने देवगढ़ (छिंदवाड़ा) जीता, किन्तु औरंगजेब ने इनका उचित सम्मान न किया. इससे रूष्ट होकर इन्होंने उस समय के हिन्दू-धर्म-रक्षक छत्रपति शिवाजी से मिलकर परामर्श करना उचित समझा और किरात का वेश बनाकर दक्षिण गए. वि० संवत् 1727 में भीमा नदी के तट पर दोनों महान वीरों का ऐतिहासिक मिलन हुआ.

था. वहाँ कुछ दिन रहकर छत्रसाल ने शिवाजी की रण नीति और शासन व्यवस्था का अध्ययन किया. [77]

शिवाजी के साथ मिलन की घटना ऐतिहासिक है. कवि ने आगे फिर स्वीकारा है कि कथावस्तुका मुख्य आधार गोरेलाल तिवारी के बुंदेलखण्ड का संक्षिप्त इतिहास, कवि लाल के " छत्रप्रकाश " है. [78] कुँवरसेन धंधेरा की पुत्री से आसक्त एवं विवाह कवि द्वारा कल्पित प्रतीत होता है.

कथावस्तु की एक उल्लेखनीय विशेषता उसमें वर्तमान राष्ट्रीय-सांस्कृतिक उद्देश्य की उदात्तता की है. इस कृति के द्वारा एक ओर समकालीन जीवन के विविध पक्षों की झलक मिलती है तो देश को मुगलों से स्वतंत्र कराने में आधुनिक स्वातंत्र्य चेतना को उद्भाषित किया गया है. इसकी तीसरी उल्लेखनीय विशेषता यह है कि इसमें कुँवरसेन धंधेरा की पुत्री के माध्यम से प्रेम और शृंगार की चेतना का यद्यपि रंग भरा है परन्तु वीरता, साहस के सामने वह चेतना दब सी गयी है. इतिहास से यह तथ्य सिद्ध है कि विदेशी शक्तियों ‡ मुगलों ‡ को देश से बहिर्गत करने के स्वतंत्रता संग्राम में सफलीभूत छत्रसाल में आधुनिक राष्ट्रीयता के भी दर्शन कराये हैं. अतः " छत्रसाल " काव्य की रचना के पीछे कवि का राष्ट्रीय उद्देश्य ही लक्ष्य किया जा सकता है ।

चरित्र चित्रण

" छत्रसाल " चरित्र प्रधान काव्य है. कवि ने छत्रसाल के वीर चरित्र को ही वर्णित करने का अपना ध्येय बनाया है. अन्य पात्रों की गतिविधियाँ के चारित्रिक विकास की संगति हेतु ही प्रस्तुत हुई हैं.

" छत्रसाल " को कवि ने सम्पूर्ण काव्य में एक वीर, साहसी, देशभक्त, मानवता के पुजारी के रूप में चित्रित किया है. भारतीय संस्कृति को पुनः स्थापित करने में छत्रसाल यत्नशील दिखाये गये हैं. औरंगजेब से

उचित सम्मान न प्राप्त कर छत्रसाल उत्तेजित हो उठा और उसने भी वीर शिवाजी के समान मुगलों की नाक में दम कर उन्हें खदेड़ने की प्रतिज्ञा की और अपनी प्रतिज्ञा का पालन अंत तक किया. छत्रसाल में स्वाभिमान का गुण भी विधमान था जो उपर्युक्त घटना से सिद्ध होता है. इसे दूसरे रूप में इस प्रकार भी कहा जा सकता है कि छत्रसाल पहले तो मुगलों के सहायक रहे परन्तु उचित सम्मान न प्राप्त होने पर उनका स्वाभिमान आहत होता है जो उन्हें देशभक्त, मानवता का पुजारी बना देता है. इस प्रकार वह एक क्षत्रिय वीर है और मुगल दरबार में मुगलों की दासता से मुक्त होने की घोषणा निर्भय होकर करता है. [79]

वीरता के साथ-2 कवि ने छत्रसाल के प्रेमी रूप को भी उद्घाटित करने का प्रयास किया है. कुँवरसेन धंधेरा के साथ युद्ध के समय जब छत्रसाल किले को विजित कर लेते हैं तो धंधेरा की पुत्री जो उस समय पुरुष वेश में थी, कि पगड़ी खुल जाती है और वह पकड़ी जाती है परन्तु उस वक्त छत्रसाल की आंखों से उस तरुणी के नयन मिलते हैं एवं बहुत सी बातें कह जाते हैं. ऐसा प्रतीत होता था मानों रति पति के बंधन में प्रकट हो गया हो । [80] छत्रसाल एक दयालु, सहृदय व्यक्ति भी हैं जो उसकी शरण में आ जाता है उसे सब भेद भाव भूलकर गले लगा लेते हैं...

" छत्रसाल ने कहा, " मुक्त कर दों, ये वीर धँधेरे,
नहीं शत्रु मैं इन्हें समझता ये हैं भाई मेरे । " [81]

इस प्रकार कवि ने छत्रसाल के चरित्र को एक सफल वीर नायक, प्रेमी, मानवता के आदर्शों से परिपूर्ण हैं. कुछ कमजोरियों के अलावा कवि ने उसे एक सफल नायक के रूप में उद्घाटित किया है ।

रस :-

छत्रसाल महाकाव्य प्रारंभ से लेकर अंत तक वीरत्व एवं ओज से परिपूर्ण है. इसके साथ-साथ इसमें अनेक युद्धों के वर्णन यथा कुँवरसेन धँधेरा के साथ

युद्ध, " धामौनी " का युद्ध, सरुद्दीन के साथ हुए " मौदहा " के युद्ध आदि के वर्णन कवि ने बड़ी सजीवता से किए हैं. कुँवरसेन धँधेरा के युद्ध में बुदेले वीरों की वीरता का वर्णन है जिसमें विवरण अधिक दृष्टिगोचर होता है. " धामौनी " युद्ध के समय वीरता के भाव दृष्टिगोचर होते हैं. वीरता के कितने सुन्दर रंग कवि ने भरे हैं...

" दोनों ओर वीर मदमाते थे रण-मण्डल छाए,
सिंह-सिंह से भिड़े कौन फिर विजय शीघ्र ही पाए ।
गरज रही थी तोपें, नभ में को कोक वान मँडराए ।
ज्यों ही छुटे वाण त्यों ही चट प्रत्यंचा पर आए ।
रुण्ड- मुण्ड से पटी मेदिनी, बही रक्त धाराएँ,
पीछे वीर नहीं हटते थे, चाहे वे मिट जाएँ । " 82

इस प्रकार वीरता के अन्य पक्ष साहस, धैर्य; शूरता आदि इस महाकाव्य में दृष्टिगोचर होते हैं.

वीरता के पीछे राष्ट्रीय चेतना के चित्र भी इस काव्य में दृष्टिगोचर होते हैं.

वीर अंगी रस के साथ-साथ इसमें अन्य रसों का समावेश भी कवि ने निपुणता से किया है. श्रृंगार रस का वर्णन कवि ने छत्रसाल के प्रेमी रूप को दर्शाते समय किया है जो अति अल्प है. रौद्र रस तो वीर रस के साथ-साथ ही दृष्टिगोचर होता है. युद्ध वर्णन करते समय वीरों की वीरताओं के वर्णन में रौद्र रस अपनी अजस्त्र धारा के रूप में प्रवाहित हुआ है. विभत्स रस का वर्णन भी युद्ध की विभीषिका में कवि ने निपुणता के साथ किया है. वीरों का पंक्ति बद्ध होकर चलने में उनके उत्साह को भी महाकाव्यकार ने बड़ी कुशलता से दर्शाया है.

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि " छत्रसाल " महाकाव्य मुगल शासकों के साथ संघर्ष की गौरव गाथा को समेटे हुए है और आधुनिक स्वातंत्र्य चेतना का उद्भाषित करने में यह कवि का एक सशक्त प्रयास है.

मूल्यांकन

मध्यकालीन ऐतिहासिक कथानक पर आधारित महाकाव्यों की विवेचना करने के उपरान्त यह देखने में आता है कि इन चारों महाकाव्यों के कथानक इतिहास प्रसिद्ध वीरों - प्रताप, पृथ्वीराज, छत्रसाल और रानी पद्मिनी को आधार बनाकर लिखे गये हैं. कथावस्तु की दृष्टि से जनश्रुतियों पर आधारित इतिहास और कल्पना का योग इन महाकाव्यों में मिलता है. प्रासंगिक कथाओं के नाम पर " हल्दीघाटी " में पुरोहित के बलिदान से सम्बन्धित घटना है तो " आर्यावर्त " में जयचन्द की सभा में चारण का उल्लेख किया जा सकता है, " जौहर " में राणा लक्ष्मण सिंह का स्वप्न,अधिष्ठाती देवी का राज रक्त मांगना एवं रावल का आखेट के समय शाप ग्रस्त होना ही प्रासंगिक कथाओं की कोटि में आ सकती हैं. इसी प्रकार " छत्रसाल " में भी कुंवरसेन धंधेरा, प्राणनाथ, रनदूला सदरुद्दीन की कथाएँ गिनाई जा सकती हैं. इस प्रकार यदि तुलनात्मक दृष्टि से देखा जाये तो इन महाकाव्यों के रचयिताओं ने प्रासंगिक कथाओं की भरमार नहीं की है. इन प्रासंगिक कथाओं में यत्रतत्र कथानक रुढ़ियाँ भी मिलती हैं जैसे स्वप्न, शाप इत्यादि हैं.

नायक को ध्यान में रखकर इस काल खण्ड के दो महाकाव्य " हल्दीघाटी " एवं " छत्रसाल " लिखे गये हैं. स्वातंत्र्य चेतना को ध्यान में रखकर भी काव्य रचनायें हुई हैं. " हल्दीघाटी " के नायक प्रताप के माध्यम से, छत्रसाल एवं पृथ्वीराज के माध्यम से आधुनिक स्वातन्त्र्य को उद्भाषित किया है., प्राचीन से सशक्त प्रेरणा ग्रहण कर साहित्य-मनीषियों ने अपनी लेखनी द्वारा इतिहास की महान आत्माओं, वीर

पात्रों और आदर्श नारियों की जीवन गाथाओं को सजीव रूप प्रदान किया है. यह भी उल्लेखनीय है कि इस काल खण्ड में क्रांतिकारियों के प्रयास हो रहे थे एवं कांग्रेस के प्रयत्न भी चल रहे थे. अप्रत्यक्ष रूप से युगीन चेतना पर अपना प्रभाव डाल रहे थे. यद्यपि श्यामनारायण पाण्डेय का " शिवाजी " महाकाव्य हमारे आलोच्य काल के बाहर है परन्तु फिर भी वह सम्पूर्ण चेतना को अपने में समेटे हुए है. इन वर्णनों में ओज का प्राधान्य है. यह लोकमान्य तिलक जैसे उग्र राष्ट्रवादियों का प्रभाव था जिन्होंने देशवासियों को अपनी छिपी हुई शक्ति पहचानने के लिए, देश के वीर चरित्रों की ओर देखने के लिए प्रेरित किया.

इन चारों महाकाव्यों में से तीन मुगल शासकों के साथ संघर्ष की गौरव गाथा को समेटे हुए है और " आर्यावर्त " विदेशी आक्रमण के विरुद्ध जननायकों तथा भारतीय जनता की स्वातंत्र्य चेतना को उद्भाषित करता है. गुरुभक्त सिंह " भक्त " की सशक्त रचना " नूरजहाँ " यद्यपि शृंगारिक है परन्तु इसमें वर्णित शेर अफगान का चरित्र एक वीर चरित्र है और राष्ट्रीय भावना से ओतप्रोत है. " आर्यावर्त " की संयोगिता के चरित्र को उभारने में युगीन नारी मुक्ति आन्दोलन को दृष्टिगत किया जा सकता है. इस प्रकार कहा जा सकता है कि प्राचीन सांस्कृतिक पुनर्जागरण से प्रेरणा ग्रहण कर वीरत्वपूर्ण वीररसात्मक महाकाव्यों की रचना हुई जो हिन्दी साहित्य के इतिहास के लिए गौरव की वस्तु है ।

3. सम सामायिक राष्ट्रीय चेतना से ग्रहीत कथानकों पर आधारित

यह निर्दिष्ट किया जा चुका है कि समसामायिक राष्ट्रीय चेतना से ग्रहीत कथानक पर आधारित " झाँसी की रानी ", " तात्याटोपे " एवं " सरदार भगतसिंह " नामक तीन महाकाव्य आते हैं. तीनों के नायक एवं आधिकारिक कथायें ऐतिहासिक हैं. तीनों ही स्वतंत्रता के उपरान्त

की रचनायें हैं. प्रथम दो महाकाव्य स्वतंत्रता संग्राम के जन नायक दो प्रसिद्ध वीरों को लेकर लिखे गये हैं तो तीसरा ब्रिटिश शासन के विरुद्ध आतंकवादी क्रान्ति का उद्घोष करने वाले बलिदानी वीर सरदार भगत-सिंह के चरित्र को लेकर है. यों देखा जाये तो इन तीनों का राष्ट्रीय कांग्रेस द्वारा संचालित सत्याग्रह आन्दोलन से कोई संबंध नहीं है किन्तु इनमें राजनीतिक संघर्ष, राष्ट्र में स्वतंत्रता की भावना को प्रज्ज्वलित करने में अत्यधिक सहायक रहे हैं. इस राष्ट्रीय चेतना के साथ वीर पूजा की भावना को सम्बन्धित काव्य के वर्णन में सहायक कहीं जा सकती है.

झाँसी की रानी

श्यामनारायण प्रसाद कृत " झाँसी की रानी " महाकाव्य में लक्ष्मी-बाई की अप्रतिम शौर्य सम्पन्न लोक विश्रुत उत्सर्गमयी जीवन गाथा को महाकाव्योचित गरिमा के साथ प्रस्तुत किया गया है. 23 खण्डों में विभा-जित इस महाकाव्य के 22 खण्डों को " हुंकार " और अंतिम को " महा-प्रस्थान " नाम दिया गया है. परिचय में कवि ने 1857 के स्वतंत्रता संग्राम एवं अंग्रेजी साम्राज्य की अपरिमित शक्ति, सामर्थ्य का स्मरण किया है. रानी ने सीमित साधनों किन्तु असीमित पराक्रम और स्वाभिमान के बल पर लोहा लेकर अंग्रेजी शासन की नींव को झकझोर कर ऐसा जर्जरित कर दिया कि अंत में सन् 1947 में वह ढह ही गया. कृति के आरंभ में कवि ने काव्य की सृजन प्रेरणा पर प्रकाश डालते हुए कहा है कि " रानी की अमर कहानी यद्यपि बीते हुए युग की बात है किन्तु यह वीर मन्त्र है जिसके द्वारा भारत का कण-कण जगाया जा सकता है. लक्ष्मीबाई का जन्म पृथ्वी पर दैवी शक्ति का आविर्भाव है. " [84]

कवि ने लक्ष्मीबाई के जन्म एवं शैशवकाल की प्रमुख घटनाओं-नाना साहब का घोड़े से गिरना, पिता मोरोपन्त की चिन्ता आदि का वर्णन किया है. कर्णवती, ताराबाई, हाड़ा रानी और जीजाबाई

के आदर्शों का रानी ने अनुकरण कर बाधाओं से डरकर शत्रु के सामने नतमस्तक न होने की प्रतिज्ञा की घटना को भी दर्शाया है. [85] गंगाधर राव से विवाह के उपरान्त भी वह भारत के उद्धार की ही चिन्ता करती दृष्टिगोचर होती है ।

यही कारण है कि वह अपनी दासियों से नारी की गौरव गरिमा एवं शक्ति मत्तता से अवगत कराके उन्हें देशप्रेम की भावना से ओतप्रोत करके नारी-सेना के संगठन का उदात्त संकल्प करती है.

दामोदर राव के यज्ञोपवीत के अवसर पर रानी लक्ष्मीबाई बड़ी ओजस्वी वक्तृता देती है जिसको सुनकर राज समाज तमतमा उठता है और सम्पूर्ण राज्य अरिदल से लोहा लेने की प्रतिज्ञा करता है. अंग्रेजों के अत्याचारों को सुनकर रानी लक्ष्मीबाई तलवार लेकर शत्रु से बदला लेने की प्रतिज्ञा करती है. रानी की गतिविधियों पर अंग्रेजी सरकार कड़ी नजर रखती है . रानी की योजनाओं को ध्वस्त करने के लिए अंग्रेज झांसी के दुर्ग पर आक्रमण कर देते हैं. महारानी के कुशल नेतृत्व, दूरदर्शी, युद्ध सज्जा, सुसंगठित सैन्य संचालन और जनता के उच्च मनोबल के कारण अंग्रेजी सेना त्राहि-त्राहि करने लगती है, परन्तु यहाँ भी देशद्रोही पीर अली और दूल्हा अंग्रेजों को दुर्ग में दाखिल होने में मदद करते हैं. रानी अपने बचे हुए साथियों को साथ लेकर कालपी पहुँचती है जहाँ अंग्रेजों से अद्भुत पराक्रम से लड़ती हुई स्वर्ग सिधार जाती है ।

समीक्षा

इस महाकाव्य की अगर आधिकारिक और प्रासंगिक कथाओं के समीचीन गुंफन की दृष्टि से विचार करें तो यह कहा जा सकता है कि महारानी लक्ष्मीबाई की आधिकारिक कथा इतिहास प्रसिद्ध 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम की एक प्रसिद्ध घटना है जिसमें महारानी लक्ष्मीबाई ने अंग्रेजों की कूटनीति के विरुद्ध आवाज उठाई थी. इसके साथ ही

प्रासंगिक घटनायें नाना साहब का घोड़े से गिरना, दामोदरराव के यज्ञोपवीत पर ओजस्वी भाषण देना प्रासंगिक कथाएँ हैं जिनका वर्णन इतिहास में नहीं मिलता. ये घटनाएँ कवि द्वारा कल्पना प्रसूत लगती हैं. रानी का दासियों को जाग्रत कर नारी की गौरव गरिमा एवं शक्ति मन्तता से अवगत कराके उन्हें देश प्रेम की भावना से ओतप्रोत करना, तलवार लेकर शत्रु से बदला लेने की प्रतिज्ञा करना, इत्यादि घटनाएँ मार्मिक स्थलों का आभास देती है. राजनीति और प्राकृतिक प्रसंगों का भी वर्णन मिलता है. सामाजिक जीवन पर अधिक प्रकाश नहीं पड़ता, यह उल्लेखनीय है कि इसमें वीरता, साहस, धैर्य आदि के उदात्त प्रसंगों की योजना अधिकाधिक मात्रा में हुई है. अतः यह कहा जा सकता है कि सम्पूर्ण काव्य वीर रस पूर्ण वर्णनों, घटनाओं एवं सशक्त चित्रों से परिपूर्ण है. दूसरा उल्लेखनीय तथ्य यह है कि इसकी रचना स्वतंत्रता की प्राप्ति के पश्चात् हुई है परन्तु फिर भी यह राष्ट्रीय चेतना से प्रेरित माना जा सकता है. इसमें भारत की नारियों के वीरवृत्ति का गौरव गान किया गया है ।

चरित्र-चित्रण

श्यामनारायण प्रसाद जी ने सम्पूर्ण काव्य में नायिका लक्ष्मीबाई की चारित्रिक विशेषताओं को कुशलता से उभारा है. काव्यारम्भ से पूर्व " परिचय खण्ड " के अंतर्गत महारानी लक्ष्मीबाई के महिमामय व्यक्तित्व का निरूपण करते हुए कवि ने उसे स्वतंत्रता का ध्वज फहराने वाली रण-चंडिका की उपाधि से विभूषित किया है. महारानी ने बुंदेल खण्ड में नवजागरण का महान उद्घोष करके झांसी में निद्रा निमग्न जन जीवन में नयी चेतना का संचार किया तथा मातृभूमि की अर्चना में अपना सर्वस्व समर्पित कर दिया । [86]

" झाँसी की रानी " महाकाव्य के सम्पूर्ण कलेवर में महारानी लक्ष्मीबाई की आग्नेय झंकृतियों का ही प्रतिध्वनन है. भारतीय इतिहास

की गौरवमयी परम्परा में महाराणा प्रताप, छत्रपति शिवाजी, गुरु गोविन्दसिंह, घोघा बाप्पा, पन्नाधाय, महारानी पद्मिनी, हाड़ा रानी, रानी कर्णवती, ताराबाई जैसे अनेक युगान्तकारी व्यक्तित्व हुए हैं जिन्होंने जातीय स्वाभिमान, राष्ट्रीय गौरव और मातृभूमि के हित रक्षण में अपना सर्वस्व समर्पित करके उत्सर्ग के उच्च कीर्तिमान स्थापित किये हैं, किंतु महारानी लक्ष्मीबाई का यशस्वी चरित्र तो बलिदान का ऐसा देदीप्यमान आलोक स्तम्भ है, जिसके ज्योतिर्मय विकीर्णसे असंख्य प्रसुप्त जनों में नवचेतना का आविर्भाव हुआ. ऐसी नवचेतना जिसने सहस्त्रों शताब्दियों से पराधीन भारतीयों को स्वाधीनता के महायज्ञ में अपने प्राणों की आहुति देने के लिए अनुप्रेरित किया. भारतीय राष्ट्रीय स्वाधीनता आंदोलन की विप्लवी भूमिका के निर्माण में सन् 1857 की क्रान्ति अविस्मरणीय घटना है और इस क्रान्ति की अग्रदूतिका और प्रेरणादात्री के रूप में महारानी लक्ष्मीबाई का बलिदान अद्वितीय है ।

भारतीय जन मानस में विद्यमान लोक विश्वास का भी उपयोग रानी के व्यक्तित्व को उभारने में किया गया है. उसे दैवी शक्ति का अवतार बताने में यही चेतना काम करती है. [87] वह एक ऐसी नारी है जो वीरता के जीवन्त आदर्शों को अपने व्यक्तित्व और चिन्तन में आत्मसात कर चुकी है. विवाहोपरान्त भी रानी अपना श्रृंगार तलवार आदि शस्त्रों से ही करना चाहती है. जब भारतीय नारियों का अरुण सुहाग धुल रहा हो तो रानी बहार और फाग का आनन्द कैसे लूट सकती है..

" धुले बहनों का अरुण सुहाग, मचा हो भूतल पर चीत्कार ।
नित्य मैं खेलूँ हँस हँस फाग और लूटूँ व्यंजन बहार ।। " [88]

इसके लिए रानी जीवन में कर्णवती, ताराबाई, हाड़ा रानी एवं जीजाबाई के आदर्शों का अनुसरण करने के लिए लालायित है ।

रानी लक्ष्मीबाई की वाणी ओजस्वी है. वह अपनी दासियों को नारी की गौरव गरिमा एवं शक्ति महत्ता से अवगत कराके उनमें देशप्रेम की भावना भरती है. कन्या और कुल ललना दोनों ही रूपों में महारानी लक्ष्मीबाई की वाणी में वीरत्व भाव की आग्नेय हुँकृतियों का उद्घोष पाते हैं. महारानी का मातृ रूप भी वीरता की भावना से भरा हुआ है. वह लोरी में भी अपने नन्हें शिशु को वीरों जैसा जीवन जीने के लिए प्रेरित करती है । रानी वीर ही नहीं दूरदर्शी भी है. वह दामोदर राव के यज्ञोपवीत के बहाने सभी नरेशों को निमंत्रित कर, उनसे देश की राजनीतिक स्थिति पर परामर्श करने का अवसर ढूँढ ही लेती है ।

रानी के चरित्र की अन्य विशेषता निर्भीकता एवं साहस है. युद्ध भूमि में सैन्य संचालन एवं सेना का नेतृत्व रानी अत्याधिक निपुणता से करती है. युद्ध में एक वीर की भाँति लड़ते लड़ते ही अपना आत्मबलिदान भी करती है ।

इस प्रकार इस कृति में कन्या, कुमारी, कुल ललना, माता, राजमाता आदि सभी रूपों में महारानी के अप्रतिम शौर्य, उसके साहस, अदम्य उत्साह और अपराजेय उत्सर्ग आदि का परिचय मिलता है. शौर्य, साहस, निर्भीकता, आत्मबल, आत्म सम्मान, देश प्रेम एवं आत्म बलिदान रानी के चरित्र के उज्ज्वलतम रत्न हैं. इन सबसे उसका चरित्र स्वतः देदीप्यमान रहता है ।

रस

इस महाकाव्य का अन्त यद्यपि रानी की मृत्यु से होता है परन्तु करुणा का आभास न मिलकर इस मृत्यु से रानी की वीरता और बलिदान की चेतना ही उभर कर सामने आती है. यद्यपि इसमें वीर, शान्त, रौद्र, वात्सल्य आदि सभी रस पाये जाते हैं, तथापि इस कृति का प्रधान रस " वीर " है और तद्विषयक भाव-व्यंजना एवं परिस्थितियाँ या तो वीर

की सहायक हैं अथवा रानी झाँसी के उदात्त चरित्र का उद्‌घाटन करती हैं. युद्ध वर्णन में महारानी लक्ष्मीबाई के वीरत्व का अत्यन्त प्रभावशाली वर्णन हुआ है निम्नलिखित पंक्तियों में रानी की वीरता एवं शौर्य का सजीव चित्र अंकित किया गया है..

" तलवार किधर कब उठती थी, कब किधर छपाछप करती थी ।
यह अरिदल को ज्ञात न था, कब रुधिर लपालप करती थी ।।
केवल इतना ही कह पाते थे, रानी आई, रानी आई ।
तब तक सिर धड़ से अलग लोट, भू पर कहता रानी आई ।
जब तक घोड़े की टापों की, ध्वनि ही अरिदल सुन पाता था ।
तब तक रानी का खड्ग तुरन्त, बन मृत्यु पर आता था ।।
दाँए बाँए दो हाथों से, रानी थी रिपु सिर काट रही ।
स्वातन्त्र्य भवन की नई नींव, थी शत्रु मुण्ड से पाट रही ।। "[89]

यहाँ अरिदल आलम्बन, रानी आश्रय, शत्रु सेना का रानी आई रानी आई कहना, स्वातंत्र्य भवन की नई नींव का शत्रु मुण्ड से पटना, उद्दीपन, रानी का छपाछप करना, लपालप करते आगे बढ़ना, शत्रु के सिर को धड़ से अलग करना, उनके शीश पर मृत्यु के रूप में तलवार रखना, दाँए बाँए दोनों हाथों से रिपु सिर काटना तथा शत्रु मुण्ड से स्वातंत्र्य भवन की नई नींव पाटना आदि अनुभाव हैं. हर्ष, विजयोल्लास आदि संचारी एवं स्थायी भाव उत्साह है. अतः यहाँ वीर रस का सुन्दर परिपाक परिलक्षित होता है.

इसके अतिरिक्त इस काव्य में ओजपूर्ण वाणी के भी दर्शन होते हैं यथा युद्ध भूमि में रानी की वाणी, दामोदर राव के यज्ञोपवीत पर एवं दासियों ने नारी चेतना जगाते समय. इसका एक उदाहरण यहाँ द्रष्टव्य है..

" क्या देख रहे हे वीरों ! रणभूमि नहीं सोने की है ।
भारत जननी का पद पंकज, अरि शोणित से धोने को है ।।

इसलिए बढ़ो, चिन्ता न करो, रंचक इन नश्वर प्राणों की ।
वैरी की छाती पर गरजो, कुछ भीति न हो अरि वाणों की ।।
अरि की तोपों के मुँह में ही विकराल बाहु दो अभी डाल ।
अपनी सेना के सम्मुख अब रुक जाये आकर महाकाल ।। " 90

इसके अतिरिक्त इस महाकाव्य में अन्य रूप जैसे रानी का साहस एवं धैर्य, अकेली रह जाने पर भी अंतिम सांस तक युद्ध करना, बलिदान होने के लिए उत्साह होना आदि यत्र तत्र मिल जाते हैं. अतः यह कहा जा सकता है कि यह महाकाव्य वीर रस की एक अद्वितीय कृति है.

स्वातंत्र्य-समर सेनानी तात्याटोपे

यह महाकाव्य इकत्तीस सर्गों में विभक्त है जिनको कवि ने आहुति नाम दिया है. ये इकत्तीस आहुतियाँ इकत्तीस मई 1857 के पुण्य दिवस का स्मरण कराती हुई बलिदान की भावना की परिचायक हैं. पहली आहुति में कवि ने माँ दुर्गा की अर्चना की है तो दूसरी आहुति क्रीड़ा में नाना साहब, लक्ष्मीबाई एवं तात्याटोपे के बचपन में गंगा के तट पर घरौंदे बनाकर खेलना, नकली दुर्ग बनाना एवं नाना द्वारा उसे जीतने का वर्णन किया गया है. इसके साथ ही जननी जन्मभूमि की परतंत्रता के बारे में सोचकर चिन्तित भी है. तीसरी आहुति " ब्रह्मावर्त " में नाना, लक्ष्मी और तात्याटोपे का मिलन दिखाया है. चौथी आहुति " जननि-पूजन " में कवि ने ब्राह्मण टोपे को पूजापाठ छोड़ अस्त्र-शस्त्र द्वारा माँ का पूजन करने की प्रतिज्ञा करते दिखाया है. पाँचवी आहुति " अत्याचार " में अंग्रेजों के अत्याचार, नाना साहब को पेशवा मानने से इन्कार एवं लाख रुपये की पेंशन बन्द करने का वर्णन है. तात्या द्वारा नाना साहब को राज्य दिलाने एवं क्रूर अंग्रेजों को खदेड़ने की भीषण प्रतिज्ञा भी इसी आहुति में दृष्टिगोचर होती है. छठी आहुति " जनक्रान्ति " में तात्याटोपे हर भारतवासी में चेतना जगाता हुआ प्रतीत होता है तो सातवीं आहुति

" क्रान्ति-चिह्न " लाल कमल को सारे देश में घुमाकर क्रान्ति का सूत्रपात किया गया एवं 31 मई को क्रान्ति दिवस घोषित किया गया .

आठवीं आहुति " क्रान्ति- ज्वाल " में संपूर्ण देश को जागृत होते दर्शाया गया है एवं सैनिकों में कारतूसों को लेकर असन्तोष भी दिखाई पड़ता है जिसे मंगलपाण्डे जैसा वीर सह नहीं सका और वह वीर बन्दूक तानकर क्रूरों के प्राण लेता गया. जब दुश्मन का वश न चला तो मंगल पांडे के सीने में बन्दूकदाग दी. मुगल पांडे की कुर्बानी चारों ओर फैल गयी और 31 मई के स्थान पर क्रान्ति दस मई को ही फैल गई. बूढ़े बहादुर शाह को दिल्ली का सम्राट बनाया गया एवं तात्यांटोपे ने घर-घर में क्रांति का बिगुल बजा दिया.

नवीं आहुति " वीरांगना अजीजन " में वैश्या अजीजन को देश भक्ति के मार्ग पर आते हुए दिखाया गया है . दसवीं आहुति " चार जून " में वीरों के उत्साह का वर्णन मिलता है तो ग्यारहवीं आहुति " विदा बेला " में वीर पत्नी से से विदा एवं पत्नी का भी वीर वेश में युद्ध में जाने के लिए तत्पर होना दर्शाया गया है. बारहवीं आहुति " " स्वातंत्र्य - समर " में अंग्रेजों के साथ तात्याटोपे के युद्ध का वर्णन है. तेरहवीं आहुति " दरबार " में धरती पर नव दरबार सजाकर सारे सरदार, तोपची- पैदल, सवार, सिपाही, ब्राह्मण, क्षत्रिय-वणिक, किसान, साधु - सन्यासी, पीर-फकीर, धनी निर्धन, मुगल और पठान इकट्ठे होते हैं और क्रान्ति के यज्ञ में अपना सर्वस्व न्यौछावर करने के लिए दृढ़ प्रतिज्ञा करते हैं. चौदहवीं आहुति " स्वातंत्र्य- संग्राम " में तात्या के युद्ध का वर्णन है. पन्द्रहवीं आहुति " वीरांगनायें " में 23 जून की मंगल मय प्रभात का वर्णन है जब बंगाल से अंग्रेजों ने नवाबी ताज छीनकर अपना अधिकार जमाया था. स्वतंत्रता के लिए हुए युद्ध में जब वीर सैनिक विजय के अरमानों को खो बैठे उस समय देश की बहिने दुर्गा सम शत्रुओं पर टूट पड़ी आजीजन ने सैनिकों में पौरूष जगाया. उसी समय वीर तात्या भी वहाँ आ पहुँचा.

इक्कीस दिनों से घमासान युद्ध हुआ और अंग्रेजों ने हार मान ली. सोलहवीं आहुति " आतंक " में तात्या के घमासान युद्ध को देखकर अंग्रेजों में आतंक छा गया. सत्रहवीं आहुति " अभयदान " में सतीचौरा के घाट पर अंग्रजों को बिना किसी भय के दूर पहुँचाने की योजना, सतीचौरा घाट पर अंग्रेजों द्वारा उन पर आक्रमण तथा तात्या द्वारा उनकी रक्षा का वर्णन है. उन्नीसवीं आहुति " समर मरघट " में युद्ध की भयानकता का वर्णन है तो बीसवीं आहुति " नर-संहार " में हैवलोक और नील द्वारा हुए कत्लेआम का वर्णन है. इकीसवीं आहुति " क्रान्ति-अर्घ्य " में ग्वालियर में हुई क्रांति का वर्णन है. बाईसवीं आहुति " स्वतंत्रता संगर " में कालपी दुर्ग को तात्या द्वारा विजयी बनाया जाना एवं अंग्रजों का क्रांतिकारियों को खदेड़ कर निश्चित होकर रागरंग में डूबने का वर्णन है. दूरदर्शी टोपे ने अचानक हमला कर फिर से विजय हासिल कर ली.

तेईसवीं आहुति " मुक्ति अन्त " में कैम्पबेल रण-वारिध का वर्णन है वह लखनऊ छोड़कर विराट सेना लेकर वानपुर की ओर चल पड़ा. यहाँ तात्या और कैम्पबेल में भयंकर युद्ध होता है और टोपे को भागकर काल्पी दुर्ग में आना पड़ता है. चौबीसवीं आहुति " शक्ति-मिलन " में लक्ष्मीबाई से टोपे की मुलाकात होती है और उन्हें गुप्तचर द्वारा सन्देश मिलता है कि झाँसी को नष्ट कर ह्यूरोज अभी काल्पी दुर्ग को लेने के लिए आ रहा है. पचीसवीं आहुति " निराशा " में कौंच गाँव में हुए भयंकर युद्ध में टोपे की निराशा का वर्णन है वह अस्त्र शस्त्र छोड़ फिर माला धारण करना चाहता है परन्तु मिता से नवीन प्रकाश पा फिर से युद्ध के लिए तैयार हो जाता है. छब्बीसवीं आहुति कालपी में रानी लक्ष्मीबाई एवं तात्याटोपे के साथ अंग्रेजों का भयंकर युद्ध कथा कालपी के किले पर अंग्रेजों का अधिकार वर्णित है.

सत्ताइसवीं आहुति " ग्वालियर " में दोनों का ग्वालियर पर आक्रमण कर दुर्ग को जीतने का वर्णन है . प्रजा खुशियों में झूम रही है.

रानी और टोपे बहुत कोशिश करते हैं उन्हें जगाने की पर मोह जाल में फँसे हुओं पर तनिक भी असर नहीं होता. ह्यूरोज ने ग्वालियर पर हमला कर उसे फिर विजयी बना लिया. अठाइसवीं आहुति " शक्ति-आत्मोत्सर्ग " में भारतीय वीरों में ओज एवं पौरुष भरती हुई लक्ष्मीबाई के युद्ध एवं वीरगति पाना दर्शाया गया है. उन्तीसवीं आहुति " देशद्रोह " में मानसिंह के देशद्रोह के लिए तैयार होने का वर्णन है तो तीसवीं आहुति " अन्तिम प्रयत्न " में तात्याटोपे का नर्मदापार कर दक्षिण की ओर जाने का दृश्य दर्शाया गया है. इसके साथ ही मानसिंह द्वारा मित्र बनकर तात्या को बंदी करवाने का दृश्य है. इकत्तीसवीं आहुति " पूर्णाहुति " में तात्याटोपे की फांसी का वर्णन है जिसके अंत के साथ भारत की स्वतंत्रता का सूर्य भी अस्त हो गया.

सर्गों की उपर्युक्त रुपरेखा से प्रकट है कि कवि ने सन् 1857 ई० के स्वातंत्र्य -समर की लगभग सभी महत्वपूर्ण घटनाओं को एक साथ समेटने और उन्हें तात्याटोपे के व्यक्तित्व से जोड़ने का प्रयास किया है.

समीक्षा

" तात्याटोपे " महाकाव्य में आधिकारिक अथवा मुख्य कथा के साथ प्रासंगिक कथाओं का समुचित गुंफन विद्यमान है. तात्याटोपे की आधिकारिक कथा के साथ लक्ष्मीबाई, तात्याटोपे, नाना साहब का बिठूर में मिलन, मंगल पांडे, अजीजन बाई की प्रासंगिक कथाएँ हैं. 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम की प्रसिद्ध ऐतिहासिक घटना एवं तीन क्रान्तिकारी वीरों का मिलन, वेश्या अजीजन बाई की कथा तथा तात्या द्वारा बहादुरशाह को दिल्ली का सम्राट घोषित करना आदि घटनाएँ कवि कल्पित प्रतीत होती हैं.

इस महाकाव्य की कथावस्तु की प्रथम उल्लेखनीय विशेषता उसमें वर्तमान राष्ट्रीय उद्देश्य की उदात्तता की है. नायक तात्याटोपे के

माध्यम से कवि ने स्वातन्त्र्य चेतना को उभारने का सफल प्रयास किया है. दूसरी उल्लेखनीय विशेषता क्रान्तिकारियों द्वारा किये गये प्रयासों की सजीवता की है. कथावस्तु की तीसरी विशेषता मार्मिक प्रसंगों की अवधारणा का सफलतापूर्वक निर्वाह की है. आजीजन की कथा, सतीचौरा की घटना, लक्ष्मीबाई की मृत्यु आदि प्रसंगों को बड़ी कुशलता एवं मार्मिकता से कवि ने प्रस्तुत किया है. कथानक की चौथी विशेषता प्राकृतिक दृश्यों के साथ राजनीतिक प्रसंगों के समावेश की है. यह उल्लेखनीय तथ्य है कि इसमें वीरता, साहस, धैर्य आदि उदात्त प्रसंगों की योजना अत्यधिक मात्रा में हुई है. कथानक की छठी विशेषता बलिदान होने की है. देश पर बलिदान होने के लिए प्रत्येक नर नारी तैयार हो गया था.

इस महाकाव्य के बारे में कवि स्वयं कहता है..

" तात्याटोपे वास्तव में महाकाव्य की दृष्टि से नहीं लिखा गया है वरन् बन पड़ा है. मेरे सम्मुख महाकाव्य और उसके मुख्य तत्वों का प्रश्न ही नहीं रहा, केवल स्वातंत्र्य सेनानी का पुनीत मुक्ति का महायज्ञ रहा और महान् पुरोहित के महान् क्रांति मंत्रों ने सम्मोहित करने के साथ साथ ओज एवं उत्साह के स्त्रोत प्रवाहित कर दिये. उस पर भी जन- जिज्ञासाओं की अपूर्व श्रद्धा एवं भक्ति ने और कुछ सोचने ही न दिया. हृदय में क्षण क्षण उद्गार उठे और महाकाव्य में प्रवाहित हो उठे. हाँ इस बात का मुझे अभिमान है कि पावन स्वदेश के पुनीत स्वातंत्र्य यज्ञ में मैं भी इकतीस आहुतियाँ छोड़ सका, काव्य सामग्री के रूप में. इकत्तीस आहुतियाँ सन् 1857 के पावन इकत्तीस मई का ही स्मरण दिलाती है ?[1]

इसमें कवि ने प्राचीनता को नवीनता के साथ अपनाया है. "अर्चना" में कवि ने भवानी की वंदना की है.

चरित्र चित्रण

चरित्र-चित्रण की दृष्टि से यह एक सफल महाकाव्य है. कवि ने

वीर क्रान्तिकारी चरित्रों का सफल वर्णन किया है. तात्याटोपे, नाना साहब एवं लक्ष्मीबाई, अजीजन के वीर चरित्रों को उभारने का सफल प्रयास किया है.

तात्याटोपे

ब्रह्मावर्त की पुण्य तपोभूमि में जन्म लेने वाला एक वीर ब्राह्मण है, जिसका बचपन नाना साहब एवं लक्ष्मीबाई के साथ बीता है. बाल्यावस्था से ही वह स्वतंत्रता के संस्कारों से ओतप्रोत दिखाया गया है.

" नहीं-नहीं मैं नहीं बनूँगा, फकत पुजारी राम का ।
आज समय आ गया देश के सम्मुख संग्राम का ।।
मेरे हाथ न माला होगी, और न होगी आरती ।
अस्त्र-शस्त्र हाथों में होंगे, सम्मुख होगी भारती ।।

तात्याटोपे स्वामिभक्त वीर है, नमक का हक अदा करने वाला है. नाना साहब का हक दिलाने के लिए वह अपने स्वदेश पर बलि होना चाहता है. तात्याटोपे दृढ़ प्रतिज्ञ है और अपनी प्रतिज्ञा को अन्तिम साँस तक पूरी करता है. [93]

तात्याटोपे एक वीर, युद्ध कौशल में निपुण रणनीतिज्ञ है. उसकी रणनीति को देखकर अंग्रेज भी हैरान होते हैं परन्तु उसे पकड़ नहीं पाते.

वीर तात्या की वाणी में ओज है उसकी वाणी को सुनकर क्रान्ति यज्ञ हित क्या हिन्दू क्या मुसलमान, क्या मराठे क्या बुन्देले, क्या पुरबिया क्या राजपूत, क्या गरीब क्या अमीर सभी को यजमान बना दिया. जन-जन के हाथ में अस्त्र शस्त्र सुवायें दे दीं. आहुति हेतु मुण्ड-नारियल थे, हृदयों में ज्वार था. वाणी की ओजस्विता ने समाज के दलित एवं पतित अंगों के व्यक्तियों में भी क्रान्ति की ज्योति चमका दी, क्रान्ति का मंत्र फूँक दिया. रुपयों की खनखनाहट पर जो अपना तन- यौवन

प्यार सभी कुछ लुटा देती है, शरीर का क्रय विक्रय कर अपना पोषण करती है. उसमें भी नवीन क्रान्ति ज्वाला सुलग गयीं.

स्वातंत्र्य सेनानी वीर तात्या एक सन्यासी एवं त्यागी वीर है . यह सदैव पेशवा, देश का सेवक ही रहा. उनके लिए अपने रक्त के कण-कण को चढ़ा दिया. वह एक अजेय सूरमा है जिसने कभी हिम्मत नहीं हारी. आपत्तियों के पहाड़ टूटे, संकटों के तूफान आये सिन्धु प्रलय मेघ से घहरे, परन्तु वीर ज्वार आये सिन्धु के समान अबाध गति से आगे बढ़ता ही गया. विनढम कैम्पबेल से असुर सेनानी टूटे परन्तु यह वीर निर्भय हो अकेला गर्जता रहा. पराजय ने कदम-कदम पर वीर को निरुत्साहित किया, परन्तु यह सदैव अचल और हिमालय की तरह अटल रहा. कवि ने स्वयं कहा है...

" वीर तात्या टोपे जन-क्रान्ति का नायक-विनायक एवं अधि-नायक था, जन-जन के स्वातंत्र्य का शीर्ष सेनानी था, जन-जन के इन्कलाब का इन्द्रराज था, जन-जन के महायज्ञ का पुरोहित था, जन-जन की रोटी का रक्षक था । " 94

नाना साहब

नाना साहब बाजीराव पेशवा के दत्तक पुत्र है. जिनका बचपन क्रांतिकारी वीरों के साथ व्यतीत हुआ है. वे एक वीर योद्धा हैं जिसने अंग्रेजों के अत्याचारों के विरुद्ध आवाज उठाई. नाना साहब एक युद्धवीर ही नहीं दानवीर भी हैं. अंग्रजों द्वारा मिलने वाली पेन्शन से वे कितने ही गरीबों का उद्धार करते रहे हैं. वे देश की क्रांति यज्ञ में अपना बलि-दान देने के लिए सदैव तैयार रहते हैं. उनमें देश की संस्कृति के प्रेम एवं गौरव भावना के साथ-साथ मानवता कूट-कूट भरी हुई है. अत्याचारी अंग्रेजों को फिर भी क्षमा कर देना एवं जीवन दान देकर सतीचौरा के

घाट से बाहर भेजने तक तैयारी करने में यही गुण परिलक्षित होता है ।

रानी लक्ष्मीबाई

यह स्वतंत्रता संग्राम की चिनगारी को प्रज्ज्वलित करने वाली एक वीर रानी है जो बचपन से ही अस्त्र शस्त्र चलाने जैसे भयंकर खेल खेलती है, वह कायरता को अपना दुश्मन मानती है और अपना मस्तष्क शत्रु के सम्मुख नहीं झुका सकती. वह एक ऐसी भारतीय नारी है जो वीरता के जीवन्त आदर्शों को अपने व्यक्तित्व में आत्मसात कर चुकी है. यदि रानी के चरित्र की तुलना श्यामनारायण प्रसाद कृत " झाँसी की रानी " से की जाय तो यह स्पष्ट लक्षित होता है कि झाँसी की रानी में भी " तात्याटोपे " वाली रानी के सभी गुण लगभग प्राप्त होते हैं, रानी की ग्वालियर पर हमला कर धन, अस्त्र शस्त्र लाभ प्राप्त करने वाली दूरदर्शिता " झाँसी की रानी " में नहीं मिलती. रानी की वाणी में ओज एवं पौरूष है. निराश सेना में वह पौरूष और ओज का संचार अपनी वाणी द्वारा करती हैं, एवं कालपी के युद्ध के लिए उन्हें तैयार कर लेती है. इन गुणों के अतिरिक्त वह एक निपुण युद्ध संचालिका, वीर, साहसी एवं धैर्यवान है. युद्ध भूमि में अकेली रह जाने पर भी नहीं घबराती और अन्तिम साँस तक लड़ती है. रानी की वीरता का वर्णन महाकाव्य की छब्बीसवीं आहुति में मिलता है.

अजीज़न बाई

अजीज़न बाई कानपुर की मशहूर नर्तकी है और वह रुपयों की खन-खनाहट पर अपना यौवन-तन-प्यार सभी लुटा देती है, शरीर का क्रय-विक्रय कर अपना भरण पोषण करती है. वह अति सुंदरी है एवं तात्याटोपे जैसे वीर से प्रेम कर बैठती है और उसी देशभक्त वीर से प्रकाश की किरण प्राप्त कर त्यागी एवं देशभक्त बन जाती है. सारे जीवन की कमायी

पूँजी को क्रांति के यज्ञ में भेंट कर देती है. वह एक वीर योद्धा है. कानपुर में हुए इक्कीस दिन के युद्ध में स्त्री सैनिकों का संचालन करती है.

वह एक आत्मोत्सर्ग करने वाली प्रेमिका है उसका यह रूप तब सामने आता है जब युद्ध भूमि में तात्याटोपे की तरफ एक गोला भैख, भैरव,भीषण, कराल, काल के तीखे दाँत की तरह आया उसी समय अजीजन ने दीवार की भाँति खड़े होकर अपने प्राणों की आहुति चढ़ा दी. कवि ने उसे द्रौपदी, सीता, तारा के समान पुनीता एवं पूज्या माना है.

रस
=-

यह वीर रस का एक उत्कृष्ट महाकाव्य है, जिसमें श्रृंगार वीर का पोषक बनकर आया है. उसके साथ-साथ वीभत्स रस भी " समर मरघट " उन्नीसवीं आहुति एवं " नर संहार " बीसवीं आहुति में अपने चरम उत्कर्ष में पाया जाता है. भय " आतंक " आहुति में दृष्टिगोचर होता है. यह महाकाव्य युद्ध के वर्णनों से भरा पड़ा है. उत्साह एवं ओज की दर्पयुक्त उक्तियाँ भी अत्र तत्र बिखरी पड़ी है. वीरता के अन्य पक्ष साहस, धैर्य शूरता की भी कमी नहीं हैं. वीरता के पीछे राष्ट्रीय प्रेरणा दृष्टिगोचर होती है. युद्ध वर्णन अपनी पूर्ण सजीवता के साथ प्रकट हुआ है. यथा...

" घोड़े पर सती रिसानी थी, घोड़े पर चढ़ी भवानी थी ।
दुर्गा थी, चण्डी काली थी, भारत की किस्मत रानी थी ।।
दोनों हाथों में तलवारें, बिजली सी गिरती कौंध-कौंध ।
उड़ रहा वायु सा बाजी था, अरि सैन्य गिराता रौंद-रौंद ।।
थी अभी यहाँ, अब यहाँ नहीं, थी अभी वहाँ, अब वहाँ नहीं ।
ग्वालियर समर की धरती पर, वह जगह नहीं थी जहाँ नहीं ।।
बैरी बोले " वह यहाँ खड़ी, बैरी बोले " वह वहाँ खड़ी ।
तब तक गरदन पर वार हुआ, रह गये बोलते कहाँ खड़ी । " 95

" शक्ति आत्मोत्सर्ग " की उक्त अठाईसवीं आहुति के अतिरिक्त मंगलपांडे तथा " क्रान्ति चिह्न " कीसातवीं आहुति, " मुक्ति अन्त " तेईसवीं आहुति, कालपी छब्बीसवीं आहुति में युद्धों के भी बड़े सशक्त वर्णन इसमें आते हैं. [96] इसके अतिरिक्त बलिदान के लिए उत्साह अजीजन, तात्याटोपे एवं लक्ष्मीबाई में दृष्टिगोचर होता है. राष्ट्रीयता के उदाहरण भी इस महाकाव्य में यत्र तत्र मिलते हैं.

सरदार भगतसिंह
== ====

" सरदार भगतसिंह " श्री कृष्ण सरल द्वारा रचित राष्ट्रीय चेतना से युक्त 600 पृष्ठों का एक विशाल महाकाव्य है.जो 23 सर्गों में बँटा हुआ है. " सिंह जननी " से आरंभ करके " बलिदानों के मान-दण्ड से मन पर जमें हुए हो " तक समस्त सामग्री भगतसिंह तथा उनके साथियों की समस्त गतिविधियों को निवेदित है. कहीं- कहीं माँ तथा भाभी के माध्यम से कवि नारी का भावनात्मक वीरत्व भी प्रस्तुत करता है. भाभी का गोरे साहब की पत्नी का रूप धारण करके भगतसिंह और चन्द्रशेखर को लाहौर से बाहर निकालना भी नारी की साहसिकता का परिणाम है. " सिंह- जननी " में कवि माता को श्रद्धांजलि भेंट कर अपना परिचय देकर उनसे बातचीत करता हुआ आगे के लिए प्रेरणा पाता है. " पंजाबी पानी " में सुंदर प्रकृति चित्रण तथा पंजाब भूमि का परिचय देता हुआ इसमें भारतीय संस्कृति का संपुट भी समाहित करता है.

" मक्खन की टिकिया " और " बम का गोला " में भगतसिंह की बालपन की चंचलता एवं चपलता का चटकीला एवं मनोरम चित्रण किया गया है. यहाँ पर भगतसिंह का मनमोहक रूप " गुड्डा " के माध्यम से दिखाया गया है. विद्यार्थी जीवन की झाँकी भी उसमें हैं. विद्यालय में एक दिन राजनैतिक स्थिति पर वार्तालाप होता है यह वार्तालाप शांति और क्रांति मार्गों पर होता है. कुछ अहिंसावादी तत्व के भड़कने पर दोनों दलों में आपसी टकराव हो गया इस स्थिति का चित्रण कवि " शान्ति या क्रान्ति " अंक में करता है ।

" जासुराज प्रिय प्रजा दुलारी " में शासक वर्ग की शोषणात्मक वृत्ति के दर्शन कवि बड़े मार्मिक ढंग से करता है. " रौलट बिल ! हाय ! हाय ! " में 13 अप्रैल 1919 ई0 को गवर्नर ओ डायर के आदेश से जनरल डायर की कमान में जलियाँवाला बाग के हत्याकाण्ड का चित्रण मिलता है. " मुर्दे बोल उठे " में जलियाँवाले बाग के शहीदों के रक्त से सनी हुई मिट्टी, भगतसिंह जो अमृतसर से लेकर आये थे, के संदर्भ में छोटी बहन अमर कौर से वार्तालाप द्वारा उनकी संवेदनशीलता का परिचय दिया गया है. यहीं से भगतसिंह को बलिदान और मरण प्रेरणा भी मिलती है. " रूप की नगरी बम्बई में आक्रोश की लपटें " तथा " फिरंगी युवराज का बहिष्कार " में प्रिंस ऑफ वेलस के बम्बई आने पर उनका बहिष्कार एवं गोली काण्ड, " लाल पगड़ी वालों की होली " में बम्बई गोली काण्ड के प्रत्युत्तर स्वरूप " चौरा-चौरी " की घटना उल्लिखित है.

" इतिहास के आँसू " में कवि भारतीय सांस्कृतिक, ऐतिहासिक तथा आदर्शवादिता की पृष्ठभूमि पर विचार करता हुआ इन आन्दोलनों पर अपनी दार्शनिक विचारधारा को प्रस्तुत करता है.

" भगवती चरण : युवक कर्तव्य ", " यशपाल सामाजिक क्रान्ति ", " भगतसिंह : बलिदान " में नैशनल कालेज लाहौर में हुए स्नेह सम्मेलन के अवसर पर तत्कालीन भाषण प्रतियोगिता का परिचय देता है जिसमें भगतसिंह की बलिदान भावना मुखर रूप से उभरी है. " तूफान और यौवन " भगतसिंह की यौवनावस्था में शारीरिक पुष्टता, मानसिक तथा हार्दिक तूफान को, " वट-धर्मी समाज " सुखदेव और भगतसिंह का विजन में वट वृक्ष के नीचे चिंतन और विचार विमर्श और " इन्कलाब " में जनता में राष्ट्रीय चेतना जगाने के लिए खेले जाने वाले नाटक का वर्णन है. " अर्न्तद्वन्द्व " में शादी के प्रश्न को लेकर भगत के मन का अर्न्तद्वन्द्व बड़ी मार्मिकता से दर्शाया है जिसके फलस्वरूप उन्हें " गृह-त्याग " करना

पड़ता है. " पंजाब का शेर कानपुर में " अपना नाम बदलकर " बलवंतसिंह " बना फिरता है और " पंचनद का बेटा गंगा की भयंकर बाढ़ में " भी विचलित नहीं होता, बटुकेश्वर दत्त के साथ मिलकर क्रान्तिकारी कार्यों में आगे बढ़ता है. इधर माँ की बीमारी की सूचना पाकर भगतसिंह लाहौर में पहुँचता है जहाँ रामलीला के मैदान में हुई बम विस्फोट की घटना के कारण " सिंह पहली बार पिंजड़े में " बंद कर दिया जाता है.

" अवधूतों की भूतलीला " अंक में पिता द्वारा दूध की डेरी खोली जाना तथा मन न लगने पर घर छोड़कर क्रान्तिकारियों में सम्मिलित होने का परिचय मिलता है. यहाँ क्रान्तिकारियों का जठराग्नि के शमन के लिए पत्ते तक खाने का, एवं आजाद के निर्भीक चरित्र का परिचय मिलता है. क्रांतिकारियों की केन्द्रीय संगठन का परिचय द्वारा विजयकुमार सिन्हा, फणीन्द्र घोष, कुन्दलाल, ब्रह्मदत्त, मनमोहन बैनर्जी, शिववर्मा, सुरेन्द्र पाण्डे, जयदेव कपूर आदि नये चरित्रों की जानकारी कराता है.

" लाला लाजपतराय का जीवनोत्सर्ग " में लाला जी की पाशविक हत्या का वर्णन एवं भगत राजगुरु का प्रण करते दिखाया है और भगत अपनी प्रण पूर्ति " सांडर्स बध " में करते हैं. वहाँ से भागकर वे एसम्बली हाल में बम फेंककर आत्म समर्पण करते हैं. कारागार में भोजन न ठीक मिलने के कारण " ऐतिहासिक अनशन " किया जाता है जहाँ यतीन्द्रनाथ दास का देहान्त हो जाता है. इधर भगवतीचरण वर्मा रावी तट पर बम विस्फोट के कारण स्वर्ग सिधार जाते हैं एवं " आजाद की रक्त सरस्वती " में आजाद का पुलिस से मुठभेड़ में आत्महत्या करना दर्शाया गया है. अपना अन्तिम संदेश भगतसिंह देशवासियों और साथियों को इनकलाब की वाणी में देते दृष्टिगोचर होते हैं एवं हँसते-2 राजगुरु एवं सुखदेव के साथ फांसी पर झूल जाते हैं.

सर्गों की उपर्युक्त रूपरेखा से प्रकट है कि " सरदार भगतसिंह " महाकाव्य के कवि ने भगतसिंह के चरित्र को केन्द्र में रखकर स्वतंत्रता संग्राम में हुए क्रान्तिकारियों के प्रयासों एवं घटनाओं को एक साथ समेटने एवं भगतसिंह के चरित्र से संबंधित करने का प्रयास किया है.

समीक्षा

यदि इसकी आधिकारिक अथवा मुख्य कथा के साथ प्रासंगिक कथाओं का समुचित गुंफन के आधार पर विचार किया जाये तो यह स्पष्ट दृष्टि-गोचर होता है कि इसमें कवि ने भगतसिंह की आधिकारिक कथा के साथ " सिंह जननी ", " मक्खन की टिकिया ", " बम का गोला ", आचार्य चतुरसेन आदि से संबंधित प्रासंगिक कथाए हैं. आधिकारिक कथा इतिहास प्रसिद्ध घटनाओं पर आधारित है. जलियाँवाले बाग की घटना 17 नवम्बर 1921 का बम्बई गोलीकाण्ड, 5 फरवरी 1922 में चौरा चौरी की हिंसात्मक घटना, लाला लाजपतराय की मृत्यु, सांडर्स बध एवं भगतसिंह का फांसी के तख्ते पर झूलना आदि प्रसिद्ध घटनायें कवि ने इतिहास से ग्रहण कर अपनी कल्पना के माध्यम से इनमें सुन्दर रंग भरा है।

इस महाकाव्य की कथावस्तु की प्रथम उल्लेखनीय विशेषता उसमें वर्तमान राष्ट्रीय उद्देश्य की उदात्तता है. नायक के माध्यम से कवि ने आधुनिक स्वातंत्र्य चेतना को उभारने का सफल प्रयास किया है. दूसरी उल्लेखनीय विशेषता क्रान्तिकारियों द्वारा किये गये स्वतंत्रता के प्रयासों की अधिकता एवं सजीवता है. कथावस्तु की तीसरी विशेषता मार्मिक प्रसंगों की अवधारणा कर उन्हें सफलतापूर्वक वर्णित करने में है. " मक्खन की टिकिया " के माध्यम से भगत के बालपन की चपलता एवं चंचलता का हृदयग्राही वर्णन कवि ने किया है. " मुर्दे बोल उठे " में भगतसिंह द्वारा जलियाँ वाले बाग की मिट्टी लाकर चुपके-चुपके पूजना और न चाहते हुए

भी छोटी बहन को भेद बताकर संवेदनशीलता का परिचय देना एवं ऐसम्बली हाल में बम फेंकने से पहले बहन सुशीला और दुर्गा भाभी द्वारा दी गयी अंतिम विदाई, जिन्दगी मौत से दो-दो बातें एवं फांसी पर झूलने से पहले भगत, राज एवं सुखदेव का गले मिलना आदि प्रसंग बड़े मार्मिक हैं. कथानक की चौथी विशेषता प्राकृतिक वर्णनों एवं राजनीति के प्रसंगों के समावेश की है एवं पाँचवी विशेषता क्रान्तिकारियों के माध्यम से स्वातंत्रता की चेतना को उद्भाषित करने की है. यह उल्लेखनीय है कि इसमें वीरता, साहस, धैर्य आदि उदात्त प्रसंगों की योजना अत्याधिक मात्रा में हुई है. कवि गांधीवादी विचारधारा से प्रभावित न होकर तिलक के क्रान्तिकारी प्रयत्नों से प्रभावित है. अतः यह महाकाव्य राष्ट्रीय चेतना से प्रेरित माना जा सकता है. कथानक की परिणति यद्यपि तीनों वीरों को फांसी लगने में होती है,, तथापि इसमें करुणा की परिणति न होकर वीरता ही दृष्टिगोचर होती है जो इसे वीर रसात्मक महाकाव्य की सार्थकता प्रदान करती है. अतः कथावस्तु की विशेषताओं को ध्यान में रखते हुए यह कहा जा सकता है कि यह एक सशक्त वीर रसात्मक महाकाव्य है.

चरित्र चित्रण

" सरदार भगतसिंह " राष्ट्रीयता और ओजस्विता से परिपूर्ण एक ऐसी कृति है जिसमें भगतसिंह का चरित्र निरुपण विशद रूप से किया गया है. सरदार भगतसिंह का चरित्र वीरत्व की देवी चण्डी के गुणों से ओतप्रोत है. कवि ने बड़ी लगन एवं ललक से भगतसिंह का यह चरित्र प्रस्तुत किया है. शायद उस अज्ञात व्यक्ति की यह उक्ति " यदि आपका लिखा हुआ ठीक नहीं निकला तो गोली मार दूंगा " [98] अवचेतन मन में कहीं घर कर गया था. यह एक प्रेरणा स्त्रोत भी माना जा सकता है. इसी कारण यह चरित्र बड़ा सजीव, सबल एवं सुष्ठु बन पाया है.

" पंजाबी पानी " में भगतसिंह को " दूज का चाँद ", " भीषण

ज्वार ", " सागर की लहरों का पर्वत बनने के समान ", " वन प्रान्तर में, दावानल ", " मतवाले मेघों का यौवन गर्जन " तथा " तिड़ित छटा मिस वन्हि-विसर्जन " इत्यादि गुणों से परिपूर्ण युवक बना दिया. उनके यौवन ने जीवन की बाधाओं को चुनौती दी. [99]

भगतसिंह का व्यक्तित्व उनके वंशानुक्रमिक एवं परिवेशगत संस्कारों के ताने-बाने से इस प्रकार निर्मित है कि उसे देखकर वंशानुक्रम एवं पारिवेशिक मनोविज्ञान के सिद्धान्तों का स्मरण हुए बिना नहीं रहता. उसके दादा सरदार अर्जुनसिंह रूढ़ियों के विरोधी, कट्टर आर्य समाजी तथा अपने सिद्धान्तों पर अडिग रहने वाले थे. उनके पिता सरदार किशनसिंह तथा चाचा सरदार अजीतसिंह एवं स्वर्णसिंह का अपने क्रान्तिकारी सिद्धान्तों एवं जीवन के कारण जेलों में आवागमन बना रहता था. [100]
इनके पिता सरदार किशनसिंह पुत्र की हरकतों से अत्याधिक प्रसन्न होते और माता-पिता दोनों को ही इस पर गर्व था. भगतसिंह अपने पिता की क्रांतिकारी नीतियों एवं युक्तियों को गुप्त रूप से सदैव जानने की चेष्टा करते और उनसे अपने क्रान्तिकारी जीवन में प्रेरणा लेते.

इसके अतिरिक्त भगतसिंह के व्यक्तित्व निर्माण में विदेशी सरकार के विरुद्ध होने वाले स्वदेशी आंदोलन की लहर का भी गंभीर प्रभाव पड़ा. " स्वतंत्रता हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है और उसे हम लेकर ही रहेंगे " के नारे के उद्घोषक लोकमान्य तिलक, लाला लाजपतराय, आजाद हिन्द सेना के संस्थापक सुभाषचन्द्र आदि नेताओं, आजाद, राजगुरु सुखदेव जैसे क्रान्तिकारी साथियों के सम्पर्क एवं सहचर्य ने उन्हें पक्का क्रांतिकारी बना दिया. भगतसिंह अपने हठीलेपन, पराक्रम एवं अजेयतर के कारण अपनी जननी की दृष्टि में साकार सिंह था. उसकी भयंकर गर्जना सुनकर भारत का वायसराय तक कंपायमान हो उठता था । [101]

विद्यार्थी जीवन से ही एक चिन्तक एवं मनीषी का रूप भगतसिंह में दृष्टिगोचर होता है. " राजनीति पर बहस छिड़ गयी " के " मुक्ति

पंथ कौन सुन्दर है " उग्र नीति या शान्ति साधना " पर अपने विचार व्यक्ति करता हुआ भगत कहता है..

" राज्य माँग कर नहीं, जीत कर ही वे पाये जाते,
राज्य भोगते वे नर, जो हैं अपना खून बहाते ।
छीने जाते राज्य, न बाजारों में वे बिकते हैं,
नहीं राष्ट्र में शक्ति अगर, तो राज्य नहीं टिकते है । " 102

भगतसिंह की यह उक्ति विचारात्मक व्यसकता का परिचय देती है. " वट-धर्मी समाज " अंक में भी इसी प्रकार की विचारात्मक वृत्ति के दर्शन होते हैं और जब वे लाहौर नैशनल कालेज में स्नेह सम्मेलन के अवसर पर बलिदान को अपने विचारों का शीर्षक बनाकर प्रस्तुत करते हैं तो वे उसमें शक्ति एवं ओजपूर्ण वाणी का प्रयोग करते हैं. उनकी संवेदनशीलता उसके चरित्र को और भी ऊँचा उठा देती है. जलियाँवाले बाग की रक्तिम वैशाखी उसके मन में कहीं गहरी बैठ जाती है. सारा वृतान्त उसके मानसिक चित्र पटल पर समय-समय अंकित होता रहता है जिसके ही कारण उसका यह संवेदनशील मन स्वयं गोली खाने को करता है. बहन जब भाई से मिट्टी की पूजा का कारण पूछती है तो वह बड़े ही व्यथित मन से जलियाँवाले बाग में हुई अंग्रेजों के अत्याचार की संवेदना भरी स्मृति को व्यक्त करता है. यही संवेदनशीलता उसके लिए मरण प्रेरणा का मार्ग प्रस्तुत करती है ।

दिल्ली के केन्द्रीय सभा में बटुकेश्वर दत्त के साथ आठ अप्रैल 1929 को बम फेंककर धमाका करना, लालपर्चों की वर्षा, इन्कलाब जिन्दाबाद के नारे लगाते हुए आत्म समर्पण करना, शासन के बल को जानते हुए भी उसे अपनी बात कह जाना आदि घटनाएँ उनके साहसी चरित्र को उजागर करती हैं.

भगतसिंह मातृभक्त है और यही मातृभक्ति उनकी स्वदेश भक्ति से

एकाकार हो जाती है, माता की बीमारी सुनकर भी वहाँ जाना नहीं चाहता, जयदेव के कहने पर जाने को राजी होती है परन्तु साथ में यह भी कहता है कि यदि किसी मोह पाश में जकड़ने की कोशिश की गयी तो मैं सभी बंधन तोड़कर वापिस आ जाऊँगा । [103] भगतसिंह प्रतिभा का धनी एवं मेधावी है और उसका उर्दू, पंजाबी, हिन्दी और अंग्रेजी भाषा ओं पर पर्याप्त अधिकार है. हिन्दी का वह लेखक था और संस्कृत का भी उसने पर्याप्त अध्ययन किया था. परिस्थिति को भाँप लेने की उसमें अद्भुत क्षमता थी. इसीलिए वह अपने दल का मस्तिष्क कहा जाता था. [104]

हमारे चरितनायक में अभिमानशून्यता का भी गुण है. इसका पता बालगंगाधर तिलक द्वारा की गयी प्रशंसा के प्रतिवाद से लगता है. [105] क्रांतिकारी सिद्धान्तों के बावजूद भी भगतसिंह के जीवन में मात्र गंभीरता ही नहीं, हास्य विनोदशीलता भी पर्याप्त मात्रा में थी. रचनाकार के शब्दों में " विनोदप्रियता भगतसिंह से सुशोभित होती थी दूसरों को बुद्धू बनाना उनके बायें हाथ का खेल था. दूसरों के मनोरंजन के लिए स्वयं बुद्धू बन जाने में भी उसे कोई आपत्ति नहीं होती थी. जेल जीवन में भी वह हँसी मजाक और चुटकुलों द्वारा साथियों से कहकहे लगवाया करता था. [106] यही नहीं मृत्युदण्ड के समय भी राजगुरु सुखदेव के साथ नाचते गाते होली का हुड़दंग मचाते हैं और न्यायालय में इतने जोर से हँसते हैं कि सरकारी वकील अदालत की मानहानि का द्योतक मानकर न्यायालय से मृत्युदण्ड की माँग करता है तो वे कितनी निर्भीकता से हँसते हुए उत्तर देते हैं " मैं तो हँसने हँसाने के लिए पैदा हुआ हूँ, अदालत में भी हँसता रहा हूँ और जब मैं फाँसी के तख्ते पर खड़ा होकर हसूँगा तो वकील साहब किस अदालत में मेरी शिकायत करेंगे और कौन सा दण्ड मुझे दिलायेंगे ;" [107]

स्वाभिमान, जन्मभूमि, राष्ट्रप्रेम एवं बलिदान की भावना भगतसिंह के व्यक्तित्व की रीढ़ हैं. जननी जन्मभूमि उसके लिए स्वर्ग से भी

बढ़कर है. उसके क्रोड़ में स्थान पाकर उसे अपार सन्तोष होता है. यही कारण है कि वह अपने बलिदान को व्यर्थ न समझकर स्वाधीनता के पुण्य विहान के नैकट्य का उद्घोषक मानता है. [108] वास्तव में भगतसिंह में ओजस्विता, भावोत्तेजना, उत्साह, राष्ट्रप्रेम, चिन्तन आदि अनेकानेक गुण परिलक्षित होते हैं. मृत्यु का आलिगंन करना भी उसके लिए विनोद की वस्तु है. एक महान एवं पवित्र आदर्श के प्रति अडिग विश्वास ही उसे फाँसी के तख्ते के सामने भी मुस्कराने की प्रेरणा देता है. यह विश्वास ही उसके अमरत्व का राज है.

अन्य पात्र

अनेक पात्रों से सम्बन्धित घटनाओं के बावजूद भी इस काव्य में नायक के अतिरिक्त अन्य पात्रों के चरित्रों का यथेष्ट विकास नहीं दिखाई पड़ता. अतः इस कारण यह चरित प्रधान महाकाव्य होने के साथ-साथ मानव जीवन की व्यापकता का आकलन करने में उतना समर्थ नहीं हो सका है, जैसे पूर्ववर्ती पृष्टों में विवेचन महाकाव्यों में दृष्टिगत होता है. पात्रों की बहुलता को इसका एक कारण माना जा सकता है, किंतु मुख्यतः कवि की सहानुभूति नायक से ही केन्द्रीभूत होना ही उत्तरदायी है. यों देखा जाय तो अन्य पात्रों की तुलना में नायक भगतसिंह की वात्सल्य-मयी जननी विद्यावती का व्यक्तित्व कुछ अधिक उभर कर आया है. उनका वात्सल्य, सन्तान रक्षा उनके व्यक्तित्व की केन्द्रीय धुरी के समान ही है. कवि ने माता के सामान्य जीवन की प्रशंसा की है. [109] साथ ही उनकी स्मृति, प्रत्यक्षीकरण एवं कल्पनाशक्ति विषयक मनोवैज्ञानिक विशेषता-ओं को भी कवि ने यत्र तत्र वाणी दी है.

कवि महाकाव्य का आरम्भ ही माता के सबल एवं सुष्ठु चरित्र से करता है जो कि " धवल वस्त्र " धारिणी है. अपने आंचल में न जाने कितने दर्द छिपाकर भी चेहरे और वाणी में किसी प्रकार की कायरता दृष्टिगोचर नहीं होने देती बल्कि बड़े ओजपूर्ण एवं उत्तेजनात्मक ढंग से

वीरत्व वाणी का उदाहरण प्रस्तुत करती है. निम्नांकित पंक्तियों में माता का स्वर गांभीर्य बहुत गहरा है. यहाँ तक कि अपने लिए वह एक स्तुत्यात्मक शब्द भी सुनने को तैयार नहीं है..

" बस करो अब वत्स ! अपना सुन लिया स्तुतिगान ,
अब नहीं अपराध, आगे कर सकेंगे कान । " [110]

माता विद्यावती का चरित्र भी राष्ट्रीय चेतना से प्रेरित है. वह पुत्र भगतसिंह को मातृभूमि के लिए बलिदान की प्रेरणा देती है । [111]

भगतसिंह के पिता श्री किशनसिंह के व्यक्तित्व की प्रमुख विशेषता राष्ट्रप्रेम की प्रबलता है. उनका क्रान्तिकारी जीवन एवं व्यक्तित्व भगत सिंह के क्रान्तिकारी जीवन के लिए कितना साधक सिद्ध हुआ, यह कदाचित कहने की आवश्यकता नहीं. इसके अतिरिक्त उनके वात्सल्य एवं संतान रक्षा की प्रवृत्ति आलोच्य महाकाव्य में यत्र तत्र बिखरी पड़ी है.

भगतसिंह के साथी चन्द्रशेखर आजाद, सुखदेव एवं राजगुरु के व्यक्तित्व भी लगभग उन्हीं के साँचे में ढले हैं. राष्ट्र प्रेम उनके व्यक्तित्व की रग रग में भरा है और मृत्यु उनके लिए खेल मात्र है. यही कारण है कि आजाद अपनी गोलियाँ चुक जाने पर स्वयं ही अपने मस्तिष्क में अंतिम गोली मारकर मृत्यु का स्वेच्छा से वरण करते हैं वहाँ सुखदेव एवं राजगुरु नायक भगतसिंह के साथ अपनी मृत्यु के पूर्व नृत्यगान में संलग्न होकर होली का हुड़दंग मचाते हैं और उसके प्रथम वरण के लिए तर्क वितर्कपूर्ण अनुरोध करते हैं.

रस

जैसाकि कथावस्तु से स्पष्ट है कि " भगतसिंह " महाकाव्य आदि से अन्त तक वीरतापूर्ण घटनाओं से परिपूर्ण है. यद्यपि नायक की फाँसी का वर्णन इस काव्य में है परन्तु करुणा के स्थान पर बलिदान के लिए

उत्साह का भाव यहाँ प्रधान है. जिसके साथ ही केवल ओज और आक्रोश के भी दर्शन होते हैं. इस काव्य में वीर रस अनेक पक्षों में दृष्टिगोचर होता है ।

वीरोल्लास भरी वाणी यहाँ जगह-जगह दृष्टिगोचर होती है. " शान्ति या क्रान्ति " अंक में डी० ए० वी० महाविद्यालय में राजनीति की बहस पर भगतसिंह की ओजस्वी वाणी के दर्शन होते हैं. " चौरी चौरा " की हिंसात्मक घटना, " लाला लाजपतराय का जीवनोत्सर्ग " में लालाजी का प्रण इत्यादि वीरोल्लास भरी वाणी के ही उदाहरण हैं. यहाँ एक उदाहरण द्रष्टव्य है..

" ललकार उठा नर-नाहर एक गरज कर--
हिंसक प्रवृत्ति का देना होगा उत्तर,
हमको मरना कुत्तों की मौत नहीं है ।
लाठी का बदला लेंगे, देकर पत्थर ।
बदला लेना उनका, जिनके सर फूटे,
हम पर ये हत्यारे कराल हो टूटे,
ये लहू हमारा बहा रहे हैं जैसे
वैसी धारा इनमें सर से फूटे । " 112

इसके अतिरिक्त वीर रस साहस और कठिन कर्म के लिए उत्साह में भी पाया जाता है. ये क्रान्तिकारी स्वाधीनता प्राप्ति के लिए गांधीवादी नीति को अपनाना नहीं चाहते बल्कि युद्ध की अनिवार्यता स्वीकार करते हैं. साहस और कठिन कर्म के लिए उत्साह का एक उदाहरण पर्याप्त है.

" जिसने कफ़न उठाया दफ़ना कर मानव के विश्वासों को,
जला रहा जो फाड़-फाड़ कर जग के उज्ज्वल इतिहासों को--
उसको आप बतादें हम भी, हम न मात्र मिट्टी के पुतले,
जो अपना है, उसको लेने अब मतवालों के दल निकले ।

वरसे आग, उठें ज्वालाएँ, हमें नहीं उनका कुछ डर है,
कोटि-कोटि कण्ठों से मिल कर, उठता आज एक यह स्वर है."[113]

इसके साथ-साथ युद्ध का प्रत्यक्ष वर्णन भी अंग्रेजों के वध के समय पाया जाता है. सार्डर्स वध के समय यह अधिक मुखर हुआ प्रतीत होता है यथा..

" लो हुई धायें ! यह वार राजगुरु का पहला
सान्डर्स गिरा, उठने का विफल प्रयास किया,
फिर धाँय ! धाँय ! पिस्तौल भगत की गरज उठी,
उस नर-भक्षी को उसने भू पर सुला दिया । "[114]

इसके अतिरिक्त मृत्यु दण्ड पाकर भी बलिदान के लिये प्रर्याप्त उत्साह पाया जाता है ।

वीर रस के अतिरिक्त रौद्र, हास्य रस भी दृष्टिगोचर होते हैं. रौद्र तो वीर का सहायक बनकर आया है. भगतसिंह की हास्य प्रवृत्ति एवं पंजाब का शेर कानपुर में भी हास्य रस के दर्शन होते हैं. इसके अतिरिक्त इसमें राष्ट्रीयता की भावना अपनी चरम सीमा पर पहुँची हुई प्रतीत होती है. भगतसिंह के माध्यम से कवि ने इस राष्ट्रीयता के दर्शन कराये हैं.

निष्कर्ष:-

सम सामायिक घटनाओं पर आधारित महाकाव्यों की विवेचना करने के उपरान्त यह देखने में आता है कि इन तीनों महाकाव्यों के कथानक प्रसिद्ध वीरों लक्ष्मीबाई, तात्याटोपे एवं भगतसिंह को आधार बनाकर लिखे गये हैं जिनमें इतिहास और कल्पना का योग मिलता है. " तात्याटोपे और " भगतसिंह " में सर्ग- योजना भी ऐतिहासिक घटनाओं पर आधारित हैं. तात्याटोपे की इकतीस आहुतियों इकतीस मई

1857 के पुण्य दिवस का स्मरण कराती हुई बलिदान की भावना की परिचायक हैं तो " भगतसिंह " के कथानक को तेईस सर्गों में विभाजित करने का भी एक रहस्य, और वह रहस्य यह है कि भगतसिंह को केवल 23 वर्ष की अवस्था में ही फाँसी लगी थी एवं फाँसी भी सन 23 मार्च सायंकाल 7 बजकर 23 मिनट पर लगी थी. कवि ने यह स्वीकार करते हुए कहा है कि प्रत्येक सर्ग में शहीद के जीवन की प्रमुख घटनाएँ तथा देश की सामाजिक और राजनैतिक परिस्थितियाँ मिलेंगी ." 115

ये दोनों महाकाव्य 1857 में हुए प्रथम स्वतंत्रता संग्राम एवं क्रान्तिकारियों के द्वारा किये गये प्रयासों की सन 1907 ई0 से लेकर सन 1931 तक की घटनाओं पर प्रकाश डालते हैं. अतः ये तीनों महाकाव्यों की राष्ट्रीय आन्दोलनों ग्रहीत प्रेरणा स्वयंसिद्ध है. " झाँसी की रानी " के प्रणेता श्यामनारायण प्रसाद का द्वितीय वीर रस से पूर्ण महाकाव्य " श्री गुरु गोबिन्द सिंह " आत्मोत्सर्ग का जीवंत आख्यान है. इसमें कवि ने गुरु गोबिन्दसिंह के राष्ट्रीय गौरव, जातीय स्वाभिमान, स्वदेश प्रेम, अनन्त शौर्य, अतुलनीय पराक्रम और रक्तिम बलिदान का वर्णन हुआ है. यह सन 1967 की रचना है एवं हमारे विषय क्षेत्र के बाहर है. इसी प्रकार श्री कृष्ण सरल के दो और क्रान्तिकारियों की जीवन गाथा पर आधारित सशक्त महाकाव्य " आजाद " एवं " सुभाषचन्द्र " हैं. " आजाद " की रचना भी कवि ने भगतसिंह शहीद की माँ विद्यावती से प्रेरणा ग्रहण कर लिखी है. ये दोनों रचनायें भी हमारे विषय क्षेत्र के बाहर की रचनायें हैं.

रचनाकारों ने इन क्रान्तिकारियों के माध्यम से स्वातंत्र्य चेतना को दर्शाने का सफल प्रयास किया है. इन क्रांतिकारियों के प्रयत्नों के माध्यम से कवियों ने यह भी स्पष्ट करने का प्रयास किया है कि गांधीवादी नीति पूर्ण रूप से सफल नहीं है और उसके माध्यम से स्वराज्य

की प्राप्ति असंभव है. इन महाकाव्यों में केवल इतिहास प्रसिद्ध सत्य घटनाओं को ही काव्य प्रसंगों का आधार बनाया गया है. जहाँ तक कवि कल्पना की स्वच्छन्दता का प्रश्न उठाता है उसका उपयोग घटनाओं की व्याख्या अपने दृष्टिकोण से ही करने का प्रयत्न किया गया है. तात्या-टोपे में अजीजन की घटना, लक्ष्मीबाई में नाना साहब का घोड़े से गिरना, पुत्र के यज्ञोपवीत पर ओजस्वी भाषण देना ही कवि कल्पित प्रतीत होती हैं. इन वर्णनों में उत्साह एवं ओज की भावना का प्राधान्य है. इस प्रकार वर्तमान युग के हिन्दी महाकाव्यों में वीर रस की स्रोतस्विनी का अमित प्रमाद अक्षुण्ण है.

पौराणिक कथानकों पर आधारित महाकाव्य

पूर्ववर्ती विवेचन में निर्दिष्ट किया जा चुका है कि पौराणिक आख्यानों पर आधारित " अंगराज " और " रावण " ये दो ही महाकाव्य हमारे आलोच्य कालखण्ड में लिखे गये हैं. जैसा कि नाम से ही प्रकट है कि इनमें से प्रथम का कथागत आधार " महाभारत " तथा द्वितीय का आधार " बाल्मीकि रामायण " है. आधुनिक हिन्दी काव्य परम्परा में परम्परा से प्रतिष्ठा प्राप्त पात्रों को ही नहीं काव्य का विषय बनाया गया है, अपितु उपेक्षित अथवा परम्परा से हीन समझे जाने वाले चरित्रों को भी उसमें स्थान दिया गया है. ऐसे चयन के पीछे कवि में नवीनता के प्रति उत्साह के साथ बौद्धिक चेतना कार्यशील कही जा सकती है, जैसाकि परवर्ती विवेचन से प्रकट है।

कथावस्तु

आनन्दकुमार विचरित " अंगराज " महाकाव्य महाभारत के पराक्रमी वीर कर्ण के चरित को लेकर है. कर्ण को सूत पुत्र की लोक प्रसिद्धि के कारण अपने युग में वह सामाजिक महत्व नहीं प्राप्त हो सका जो सम्भवतः उसके

समान एक कुलीन को मिला होता. आधुनिक सामाजिक चिन्तन में जाति के आधार पर व्यक्ति के महत्व को नहीं स्वीकार किया गया है. इसी चेतना को आधार बनाकर राष्ट्रकवि " दिनकर " ने " रश्मिरथी " नामक खण्ड काव्य लिखा है, जिसका मूल्यांकन प्रसंगानुसार आगे किया जायेगा. आनन्दकुमार ने भी इसी दृष्टिकोण को अपना कर परम्परा से प्राप्त कर्ण के चरित्र को ऊँचे उठाने का प्रयास किया है. यह काव्य दो खण्डों में विभाजित है, जिसके प्रथम खण्ड में 15 एवं द्वितीय में दस सर्ग आते हैं.

कथा का आरंभ सूर्यलोक में कर्ण और भगवान भास्कर के मिलन और सूर्यद्वारा उनके भूलोक की भावी घटना के संकेत से होता है. द्वितीय सर्ग से कथा मुख्य कथा का आरम्भ होकर पन्द्रहवें सर्ग तक उसके महाभारत के युद्ध के पहले तक की घटना आती है. प्रारंभ में कुन्ती की कुमार्यावस्था में कर्ण के जन्म, उसके नदी में प्रवाहित करना, अधिरथ द्वारा कर्ण का पालन पोषण शस्त्र-शास्त्रों की शिक्षा ग्रहण करना, विवाह, द्रोणाचार्य द्वारा अपमान, राजपुत्रों के बीच अपनी वीरता का कर्ण द्वारा प्रदर्शन, अर्जुन द्वारा अपमान आदि की घटनायें हैं जो प्रायः महाभारत पर आधारित है. अर्जुन के अपमान के समय सुयोधन कर्ण का सम्मान करता हुआ पाण्डवों के दर्प का दमन करने के लिए उसे अंग देश का राजा बना देता है . इसके पश्चात् छल द्वारा परशुराम से सर्वास्त्र की दीक्षा, परशुराम के द्वारा शाप दिया जाना, चित्रांगद की राजकुमारी के वरण के समय सुयोधन की रक्षा, कृष्ण द्वारा उसके पूर्व जन्म की कथा बताकर राजपाट का प्रलोभन, किंतु कर्ण द्वारा प्रस्ताव की अस्वीकृति, ब्राह्मण वेश में आये इन्द्र को कवच कुण्डल का दान, कुंती को आश्वासन, कृष्ण द्वारा कर्ण की दानशीलता की परीक्षा, कर्ण द्वारा पुत्र का मांस देना, तदुपरान्त कृष्ण कर्ण की वार्ता और कर्ण द्वारा पाण्डवों को छत्रभ्रष्ट और कायर बताना तथा महाभारत के युद्ध की घटना आती है. युद्ध में कर्ण की वीरता का विस्तार से वर्णन करने के उपरान्त उसकी मृत्यु पर धर्मराज युधिष्ठिर के संताप के वर्णन के साथ कुंती

कर्ण के अपने पुत्र होने का रहस्योद्घाटन करती हुई पाण्डवों को कर्ण की पिण्डोदत्त क्रिया का आदेश देती है जिससे युधिष्ठिर को अत्यन्त पश्चा-ताप भरे/ होता. इस प्रकार कथा कि समाप्ति इस शोक पूर्ण और पश्चा-ताप भरे वातावरण में होती है.

हरदयालु सिंह द्वारा रचित " रावण " महाकाव्य सत्रह सर्गों में विभाजित ब्रजभाषा की रचना है. कथा का आरंभ विन्ध्याटवी की पृष्ठभूमि में रावण कुम्भ कर्ण विभीषण और शूर्पणखा की उत्पत्ति से होता है. तदानन्तर रावण मन्दोदरी विवाह, रावण राज्य की स्थापना, लक्ष्मण द्वारा शूर्पणखा का अपमान, सीता हरण, राम-रावण युद्ध और विभीषण के राजतिलक की घटनायें आती हैं जो प्राय: बाल्मीकि रामायण पर आधारित हैं. किन्तु आगे चलकर रावण पुत्र अरिमर्दन का युद्ध, विभीषण की पराजय और अरिमर्दन की अध्यक्षता में लंका के स्वाधीनता की प्रतिष्ठा आदि कवि कल्पना प्रसूत घटनायें हैं.

समीक्षा

कथावस्तु की उपर्युक्त रूपरेखा से स्पष्ट है कि " अंगराज " महा-काव्य में कर्ण के सम्पूर्ण चरित्र को समेटने का प्रयत्न किया गया है और उसका अंगराज के रूप में व्यक्तित्व एवं सीमित रूप में ही उभर कर आया है. जो अंगराज नाम को सार्थकता नहीं प्रदान करता. कथावस्तु की बाहरी रूप-रेखा महाभारत की है जिसमें कवि ने बीच-बीच में थोड़ा बहुत परिवर्तन ला दिया है. " रावण " महाकाव्य में रावण बध के बाद की अरिमर्दन की घटना वस्तुत: नवीन चेतना से संयुक्त है. इस कवि कल्पना में मौलिकता की जहाँ सराहना की जा सकती है वहाँ रावण शीर्षक पर एक प्रश्न चिह्न अवश्य लग जाता है. यदि केवल अरिमर्दन के व्यक्तित्व को पूरे काव्य में उभारा जाता और राम रावण युद्ध को पृष्ठभूमि में रखा जाता तो सही अर्थों में यह काव्य एक सराहनीय मौलिक प्रयास कहा जा सकता था. इन दोनों काव्य कृतियों की कथावस्तु पर यहाँ क्रमश: विचार किया जा

रहा है ।

अंगराज की भूमिका में उसके कवि ने लिखा है कि...

" उसकी कथा सम्पदा भारत की है, काव्य सम्पदा मेरी है, वृक्ष व्यास जी के हैं, ऋतुएँ मेरी हैं, मूल उनका है, फल-फूल मेरे हैं, शाखाएँ प्राचीन हैं लेकिन पल्लव दल नवीन है, महाभारत से बीज रूप में मुझे जो मिला, उसको मैंने स्वाभाविक रीति से अंकुरित एवं पुष्पित पल्लवित किया है, अंगराज में मैंने भारती कथा के प्रचलित रूप का अन्धानुकरण नहीं किया है, इसमें महाभारत के पात्रों का स्वतन्त्र, स्वाभाविक और यथोचित व्यक्तित्व निरूपण किया गया है, घटनाओं के क्रम, वस्तु चित्रण और संवादों में भी मौलिकता मिलेगी । " [116]

किन्तु कवि द्वारा मौलिकता का यह दावा चरित्रों में कोई नया मौलिक सर्जन करने में सफल नहीं हो पाया है, पाण्डवों, द्रौपदी, कुन्ती आदि के चरित्र चित्रण में कतिपय बद्धमूल धारणाओं एवं पूर्वाग्रहों के कारण तटस्थ नहीं रहा है, पाण्डवों को का पुरूष, क्लीव, धूर्त, अवसरवादी और दुर्व्यसनी तथा द्रौपदी को कामासक्त, संयमहीन, दम्भी आदि रूप में अंकित करना कवि की पांडवों के प्रति अनुदारता एवं कौरवों के प्रति अतिरिक्त व्यामोह ही प्रदर्शित करना दृष्टिगोचर होता है, इस विषय में डॉ० गोविन्दराम शर्मा का मत विचारणीय है...

" युधिष्ठिर, अर्जुन, भीम और द्रौपदी के पावन चरित्र को गिराकर दुर्योधन और उसके मित्र कर्ण को ऊपर उठाने में कवि का दुस्साहस लक्षित होता है, कर्ण का चरित्र स्वयंमेव इतना उदार और शक्तिशाली है कि धर्मराज युधिष्ठिर और सती साध्वी द्रौपदी के चरित्र को गिराये बिना ही उसे महत्ता मिल सकती थी, युधिष्ठिर को चरित्रहीन और द्रौपदी को पंचायती पत्नी बताकर कवि ने चिर प्रतिष्ठित लोक धारणा का विरोध किया है । " [117]

इस संदर्भ में डॉ० लालताप्रसाद सक्सेना ने भी आपत्ति उठाई है. [118] यह व्यामोह कर्ण के चरित्र को उदात्त नहीं बना पाता. सूर्यलोक में कर्ण और सूर्य का मिलन कथा को और भी पौराणिक और अस्वाभाविक बना देता है ।

अपना मन्तव्य व्यक्त करते हुए आनन्दकुमार ने लिखा है,...

" शताब्दियों की पर पद दलित जनता में जो आत्म तुच्छता, चारित्रिक दुर्बलता और भीरुता तथा अकर्मण्यता आ गयी है, उसका निराकरण ऐसे ही साहित्य से हो सकता है........ कायर, साहस, मुख निरीक्षक को कर्मोत्साह और हताश को धैर्य विश्वास देने वाला साहित्य सामयिक होगा । " [119]

यह कथन एक सीमातक उचित ही कहा जायेगा. उपर्युक्त तथ्यों के प्रकाश में मानवोचित तथ्यों के साथ अति मानवीय घटनाओं को अनावश्यक रूप से जोड़ना समसामयिकता पर व्यवधान उपस्थित करता है.

मार्मिक प्रसंगों की सफलतापूर्वक अवधारणा में कुन्ती एवं कर्ण का मिलन, बाइसवें सर्ग की भार्या का विलाप, द्रौपदी चीर हरण, राधेय का माता राधा से वार्तालाप आदि प्रसंग आते हैं. इसकी एक उल्लेखनीय विशेषता मित्र भक्ति के आदर्श की प्रतिष्ठा है. कर्ण के माध्यम से कवि ने सशक्त रूप में प्रस्तुत किया है. राजनीतिक एवं प्राकृतिक दृश्यों के वर्णनों का भी कवि ने बड़ी कुशलता से इसमें समावेश किया है. युद्ध की घटनाओं की प्रचुरता एवं सजीवता भी एक इस महाकाव्य के कथानक की अतिरिक्त विशेषता है. इस प्रकार कृति के सम्यक् अनुशीलन द्वारा हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि इसमें कवि की अपनी मौलिक काव्य चेतना है और यह कवि की अध्ययनशीलता, प्रतिभा और कल्पनाशक्ति को प्रमाणित करती है.

जैसा कि पूर्व निर्दिष्ट कथासूत्र से स्पष्ट है कि रावण महाकाव्य

में एक नहीं दो दो आधिकारिक कथाएँ हैं प्रथम रावण के चरित्र को लेकर एवं दूसरी अरिमर्दन के चरित्र को लेकर. इसके लेखन में कालिदास के रघुवंश की प्रेरणा को लक्ष्य किया जा सकता है किंतु रावण का वंश नायक की भूमिका नहीं प्राप्त कर सका है. अरिमर्दन की कल्पना एवं उसके द्वारा लंका की स्वतंत्रता का युद्ध छेड़ा जाना तथा विभीषण की पराजय आदि घटनायें कल्पना प्रसूत हैं और कवि की मौलिक प्रतिभा की परिचायक हैं. प्रासंगिक घटनायें अधिक नहीं हैं किन्तु उनका सगुफंन कथा की समीचीन गतिशीलता में सहायक हुआ है. विन्ध्याटवी संध्या, चन्द्रोदय, प्रभात आदि के वस्तु वर्णन भी महाकाव्योचित हैं. सीता हरण, राम का विलाप, सीता विलाप, सूर्पणखा का विलाप आदि मार्मिक घटनाओं की अवतारणा भी मार्मिक सौन्दर्य में वृद्धि करती है. शूर्पणखा को इस काव्य में जनस्थान के राज्यपाल के रूप में चित्रित किया गया है यह नवीनता का परिचायक है. उसके अतिरिक्त स्थान-2 पर सत्याग्रह, प्रजातंत्रीय शासन पद्धति आदि का प्रतिपादन इसको समसामयिकता से जोड़ देता है. अत: स्पष्ट है कि यह काव्य कवि की मौलिक काव्य चेतना, उसकी अध्ययनशीलता और सामंजस्यमयी प्रतिभा को प्रमाणित करता है.

दोनों कृतियों की कथावस्तु की तुलना की जाये तो " रावण " महाकाव्य " अंगराज " की तुलना में अधिक समसामयिक है, यद्यपि उसका संगठन दोहरा है तथापि कथा की गतिशीलता में व्यवधान नहीं आ पाता है. " अंगराज " में नवीनता का व्यामोह कवि के संकल्प को पूर्ण नहीं कर पाता और व्यामोह बनकर रह जाता है ।

चरित्र चित्रण

चरित्र चित्रण के दृष्टिकोण से दोनों महाकाव्यों में आधुनिक चेतना के अनुसार चरित्र सृष्टि करने का प्रयास हुआ है. रावण महाकाव्य में रावण और अरिमर्दन ये दो ही चरित्र प्रधान रूप से आते हैं प्रधान चरित्रों के अतिरिक्त विभीषण गौण पात्र आता है जब कि अंगराज में कर्ण का

चरित्र प्रधान है और युधिष्ठिर, कुन्ती, कृष्ण, सूर्य, इन्द्र आदि गौण पात्रों के रूप में आते हैं. अंगराज में कर्ण के चरित्र को गरिमामय बनाने का प्रयास है उसे शूरवीर, दानशील, सन्मित्र और गुरुभक्त आदि गुणों से सम्पन्न दिखाने के लिए आधिकारिक और प्रासंगिक कथाओं की योजना की गई है. यो देखा जाय तो उसे निष्ठावान मित्र का व्यक्तित्व सबसे अधिक उभर कर आता है. चित्रांगद की राजकुमारी के विवाह के अवसर पर वह दुर्योधन के लिए जरासंध से युद्ध करता है इसी प्रकार कृष्ण और कुंती के लाख समझाने पर भी महाभारत में कौरवों का पक्ष नहीं छोड़ता.

पराक्रमी होने के साथ-साथ वह उदार एवं क्षमाशील भी है.जो जरासंध की प्राणदान की घटना से प्रमाणित है. उसके व्यक्तित्व का दूसरा पक्ष दानवीरता का है. याचकों को मुँह मांगा दान देने के अतिरिक्त एक प्रसंग पर एकलौते पुत्र का मांस प्रदान करके उसकी दानवीरता पुत्र प्रेम पर विजय प्राप्त करती है. इसी प्रकार इन्द्र को कवच कुण्डल का दान जैसी घटनायें भी उसकी दानवीरता की परिचायक हैं ।

युद्धवीर एवं दानवीर के साथ-साथ वह धर्मवीर भी दिखाया गया है जिसके कारण इक्कीसवें सर्ग में वह मूर्च्छित अर्जुन पर प्रहार नहीं करता. कर्ण महत्वकांक्षी भी है और इसकी पूर्ति के लिए छल द्वारा परशुराम से विद्या सीखता है. द्रौपदी को लांछन और पाण्डवों को कापुरुष बताना यह पूर्वाग्रही स्वभाव को चित्रित करता है और एक प्रकार से उसके उदात्त चरित्र का निर्बल पक्ष है।

गौण पात्रों में सबसे अधिक उभरने वाला चरित्र दुर्योधन का है, जो कि परम्परागत रूप में ही प्रस्तुत हुआ है कोई नवीनता नहीं दिखाई पड़ती. इसी प्रकार अन्य पात्रों के भी चरित्र चित्रण में भी कवि की नई सर्जना को लक्ष्य नहीं किया जा सकता ।

" रावण " महाकाव्य में चरित्र सृष्टि अधिक सक्षम है. कवि ने

परम्परा से भिन्न रावण के उज्ज्वल चरित्र एवं प्रभावशाली व्यक्तित्व की सृष्टि की है. वह अपरिजेय, पराक्रमी, अदम्य उत्साही, शूरवीर, स्वाभिमानी एवं प्रौढ़ पाण्डित्य से युक्त है. वह सीता को लंका में बंदी अवश्य बनाता है किन्तु शिष्टाचार का पालन करता है. विभीषण के चरित्र चित्रण ने विश्वासघात, बन्धु-विद्रोह, राज्य लिप्त, कुत्सित वासनायें दिखाकर उसे स्वार्थी और देशद्रोही रूप में चित्रित किया है, यहाँ कवि का यथार्थवादी दृष्टिकोण उजागर होता है और वह पूर्णत: परम्परा से हटा हुआ जान पड़ता है. पाठकों को सबसे अधिक आकर्षित और प्रभावित करने वाला चरित्र अरिमर्दन का है. जैसाकि पहले दिखाया जा चुका है कि अरिमर्दन की चरित्र सृष्टि में कवि की मौलिकता उल्लेखनीय है. अरिमर्दन लंका के स्वातंत्र्य संग्राम को उजागर करने वाले तथा विभीषण के राजतंत्र के विरुद्ध जन आंदोलन करने वाले जन नायक के रूप में चित्रित हुआ है. अत: यह सर्वथा नवीन चरित्र सृष्टि है ।

रस

रस की अवतारणा की दृष्टि से दोनों महाकाव्य वीर रस प्रधान महाकाव्य हैं जिनमें युद्धवीरता का पक्ष सर्वप्रधान है. रावण महाकाव्य की अपेक्षाकृत अंगराज में वीरता का फलक अधिक विस्तृत है. अंगराज युद्धवीर, दानवीर, धर्मवीर तथा क्षमावीर इन सभी जीवन पक्षों से सम्पन्न दिखाया गया है. घटनाओं के माध्यम से इन सभी पक्षों के माध्यम से कर्ण के उदात्त व्यक्तित्व को प्रस्तुत किया गया है. " रावण " महाकाव्य में रावण प्रधानत: युद्धवीर एवं साहसी है तथा अरिमर्दन से संबंधित घटनायें युद्धवीर और कर्मवीर इन दोनों पक्षों को उजागर करती हैं ।

युद्ध वर्णन की दृष्टि से दोनों के वर्णन पर्याप्त सशक्त हैं. " अंगराज " में वीरोत्साह का वातावरण जो सेना के प्रयाण के समय दिखाया गया है अत्यन्त हृदयग्राही बन पड़ा है, यथा.....

" अंगवीर कर्ण का निदेश सुनते ही वहाँ
गूंज उठी सैन्य सिंहनाद से रणस्थली ।
वीर रस मज्जित सुसज्जित चले समस्त,
युद्ध सिद्ध आयुधी महारथी महाबली ।।
गर्वित मतंग चले, धावित तुरंग चले,
वेगित शतांग जी सजाकर ध्वजावली ।
शत्रु को पुकारती, प्रधान वैजयन्तिका की,
आरती उतारती सी भारती चमू चली ।। " [20]

इसमें सैन्य-प्रयाण का दृश्य चलचित्र की भाँति साकार हो उठा है. जरासंघ की उक्ति में भी वीरोचित्त गर्व दृष्टिगोचर होता है...

...... " हम अद्वय भट थे पृथ्वी भर में,
मिली तुम्ही से प्रथम पराजय हमें समर में
मिला पराजय से भी हमको यश निश्चय है,
वीरोत्तम से रण- साहस करना ही जय है । " [21]

इस काव्य में वीर रस के अतिरिक्त अन्य रस करुण, श्रृंगार, रौद्र, वीभत्स आदि आते हैं. करुण रस कर्ण भार्या के विलाप में बाइसवें सर्ग में एवं युधिष्ठिर के विलाप के चौबीसवें सर्ग में दृष्टिगोचर होता है. श्रृंगार का पुट द्रौपदी एवं कर्ण भार्या के परिसंवाद में दृष्टिगोचर होता है. युद्ध की मारकाट में वीभत्स और क्रोध में रौद्र रस का कवि ने सफलता से वर्णन किया है ।

इस महाकाव्य का अन्त कुन्ती द्वारा कर्ण जन्म की कथा बताकर युधिष्ठिर को पिण्डदान देने को कहने एवं युधिष्ठिर के विलाप में होता है. इससे वीर रस की चरम परिणति में बाधा उत्पन्न होती है. प्रतीत होता है कि कर्ण के प्रति सहानुभूति उत्पन्न करने के लिए इसकी सायास उद्भावना वीरस की सम्यक् प्रतिष्ठा को आघात पहुँचाती है." रावण "

महाकाव्य द्वारा युद्धों के वर्णन एवं अरिमर्दन के स्वातंत्रता के प्रयासों में वीर रस स्पष्ट दिखाई देता है. रावण के शौर्य, साहस एवं उत्साह के भव्य दृश्य यत्र-तत्र मिल जाते हैं. त्रयोदश सर्ग राम रावण युद्ध के अवसर पर वीर रस का यह वर्णन उल्लेखनीय है...

" रामहि देख निकट नियरान्यो
दससिर कोपि सरासन तान्यो ।।
बरसत बान झुकत अँधियारी ।
भादव जलद घटा जनु कारी ।।
× × ×
या बिधि बान बुन्द झरि लाई ।
रन में रुधिर नदी बह आई ।।
जहाँ सरधान बहत बिकराला ।
गज बिलास सोई जुगत किनारा ।। " 122

अरिमर्दन के प्रयासों में जैसे रावण की मृत्यु के उपरान्त भी धैर्य और साहस से लंका की स्वतंत्रता के विद्रोह का प्रयास वीर रस युक्त प्रतीत होता है. सम्पूर्ण काव्य में वीर रस की आवेगमयी धारा प्रवाहित हुई है. शास्त्रीय दृष्टि से भी इनमें वीर रस का पूर्ण परिपाक दृष्टिगोचर होता है. इसमें वीरों के भेदानुसार युद्धवीर एवं कर्मवीर रूप ही प्रमुख रूप से दृष्टिगोचर होते हैं. काव्य की चरम परिणति अरिमर्दन द्वारा लंका की स्वतंत्रता में होती हैं. इस प्रकार अन्त की दृष्टि से देखा जाये तो " रावण " महाकाव्य अधिक सशक्त प्रतीत होता है ।

मूल्यांकन

महाकाव्य और उसके लिए अपेक्षित प्रबन्ध- सौष्ठव के दृष्टिकोण से इन दोनों काव्यों के अनुशीलन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि इन दोनों का सम्बन्ध राष्ट्रीय काव्यधारा से प्रत्यक्ष रूप से नहीं स्थापित

होता । स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए संचालित राष्ट्रीय आंदोलनों के संघर्ष और इन काव्यों के संघर्ष में अन्तर है, विशेषकर " अंगराज " की स्थिति लगभग यही है, हाँ, " रावण " महाकाव्य को इस चेतना के साथ अवश्य एक सीमा तक सम्बद्ध माना जा सकता है, किन्तु आधुनिक बौद्धिक चेतना, सामाजिक दृष्टि एवं व्यक्ति को जाति-धर्म आदि के भेद-भाव का विचार किये बिना उत्थान का अवसर देने की व्यक्ति- स्वातंत्र्य की चेतना दोनों में अवश्य प्रखर हुई है ।

यह हम दिखा आये है कि आधुनिक युग की बौद्धिकता समावेश करके भी " अंगराज " काव्य की अन्तश्चेतना कथा के विनियोजन में पौराणिकता से बँधी हुई है. नायक तथा कथानक की महत्ता, सर्गबद्धता, छन्दोबद्धता, वस्तुवर्णन की परम्परा का पालन, मनोरम मार्मिक एवं प्राणवान दृश्यों की योजना आदि परम्परागत शास्त्रीय लक्षणों के निर्वाह को देखते हुए इसे महाकाव्य कहा जा सकता है किन्तु महाकाव्योचित वर्णन, जीवन के सर्वांगीण एवं विशद चित्रण का अभाव, अनुचित कल्पनाओं का विनियोजन आदि बातें महाकाव्य की गरिमा के अनुरूप नहीं हैं, डॉ० लालताप्रसाद सक्सेना का भी यह सुझाव उचित ही कहा जायेगा कि..

" उसकी (कर्ण की) मृत्यु के अनन्तर कवि को युद्ध वर्णन के प्रलोभन में न पड़कर कोई ऐसी काल्पनिक सृष्टि करनी चाहिए थी, जिससे उसका महत्व अपने पूर्ण भास्वर रूप में प्रतिष्ठित हो सकता । " [123]

" व्यक्त की उदात्तता का आधार चरित्र है जाति नहीं है " इस महद् उद्देश्य के संकल्प को पूरा करने के महद् उद्देश्य को लेकर इसमें कथा सूत्रों को अवश्य जोड़ा गया है परन्तु यह महद् उद्देश्य उत्तरार्द्ध में आकर लड़खड़ा सा गया है, अतः इसे अत्यन्त सामान्य कोटि का महाकाव्य कहा जा सकता है ।

" रावण " महाकाव्य अवश्य नवीन एवं सम सामयिक चेतना को उजागर करने वाला काव्य है जिसपर हम विस्तार से विचार कर चुके हैं किंतु प्रबन्ध संगठन की दृष्टि से इसका गठन लड़खड़ा गया है. दूसरी बात यह है कि रावण की अपेक्षाकृत अरिमर्दन का चरित्र अधिक उदात्त दिखाई पड़ता है. इसमें जनतंत्र की स्थापना की झलक भी बड़ी कुशलता के साथ अंकित की है. कुल मिलाकर देखा जाय तो भारतीय परंपरा के अछूते पक्ष को प्रकाश में लाने का काम कवि हरदयालु सिंह ने किया है और यही इस काव्य की एक उल्लेखनीय विशेषता है वैसे महाकाव्योचित गरिमा का इसमें एक सीमा तक ही आकलन हुआ है ।

निष्कर्ष =-

पौराणिक कथानक पर आधारित महाकाव्यों की विवेचना करने के उपरान्त इस तथ्य पर प्रकाश पड़ता है कि जन श्रुतियों पर आधारित उनके कथानकों में पौराणिक इतिहास एवं कवि कल्पना का योग मिलता है. दोनों के नायकों के आधार पर पौराणिक पात्रों में मानोचित कर्ण चरित्र की प्रशस्ति से संबंधित अनेक उल्लेख संस्कृत एवं हिन्दी प्रबंध काव्य परंपरा के अनेक काव्य ग्रंथों में यथा प्रसंग मिलते हैं किन्तु कर्ण को काव्य नायक के रूप में अधिष्ठित करके किसी स्वतन्त्र काव्य का प्रणयन आधुनिक काल से पूर्व नहीं हुआ था. रावण और अरिमर्दन के चरित्र इस में पहले कभी नहीं आये. इसका एक कारण तो यह प्रतीत होता है कि काव्य शास्त्र की परंपरानुसार केवल देवता या सद्वंशीय अथवा ब्राह्मण क्षत्रिय को ही महाकाव्य के नायकत्व पद का अधिकारी माना जाता रहा है. परन्तु आधुनिककाल में नवयुग चेतना के प्रसार और मानवतावादी चिन्तनधारा के द्रुतगामी प्रचार के कारण परंपरा ने जिन्हें नायक के योग्य कभी नहीं समझा, उन्हीं उपेक्षित पात्रों को बीसवीं सदी के कवियोंने महाकाव्य के नायक पद पर प्रतिष्ठित किया है. ये नायक कर्ण, रावण जैसे जाति वंश से हीन होकर भी अपने चारित्रिक उत्कर्ष की गरिमा के कारण नायक पद पर प्रतिष्ठित किए गए

हैं. इसका सफल उदाहरण आनंदकुमार विचरित " अंगराज ", दिनकर जी की रश्मिरथी, लक्ष्मीनारायण मिश्र कृत " सेनापति कर्ण " एवं हरदयालु सिंह कृत " रावण " एवं " दैत्यवंश " हैं. दिनकर जी ने कहा भी है कर्ण चरित्र का उद्धार एक तरह से सही मानवता की स्थापना का प्रयास है. " [125]

प्राचीन संस्कृति पुनर्जागरण से प्रेरणा ग्रहणकर साहित्य मनीषियों ने अपनी लेखनी द्वारा वीर वृत्ति को उभारने का प्रयास किया है. ये दोनों काव्य स्वतंत्रता उपरान्त लिखे गये हैं अतः जैसा कि पूर्ववर्ती विवेचन से प्रकट है कि इसमें स्वतंत्र भारत के नवनिर्माण की झलक देखी जा सकती है. दासता की मनोवृत्ति को विनष्ट कर प्रजापति ने प्रजातन्त्रीय शासन पद्धति का संस्थापन " रावण " महकाव्य इसका द्योतक है. अबलाओं की दशा में सुधार , न्याय/धर्म की स्थापना, विद्या कौशल के देशव्यापी प्रचार, जनोत्थान के लिए राजकोष के व्यय, सैन्य शक्ति के पुनर्गठन, गढ़ों देवालयों, उद्यान-सरोवरों आदि आदि का पुनर्निमाण में भी आधुनिक चेतना ही लक्षित होती है और यह कवि पर मार्क्सवादी प्रभाव लगता है.

वृहद् प्रबन्ध

पूर्ववर्ती विवेचन में हम स्पष्ट कर चुके हैं कि जयभारत एवं कृष्णायन आकार के दृष्टिकोण से महाकाव्य जैसे होते हुए भी उनमें वे अन्तर्वर्ती गुण नहीं पाये जाते जो महाकाव्य विषयक अनुशीलन में हमने दर्शाये हैं। इसलिए ये दोनों ही वृहद् प्रबन्ध हैं जो महाभारत की कथा को आधार बनाकर लिखे गये हैं. इनमें से कृष्णायन स्वतंत्रता पूर्व सन् 1943 की रचना है तो जयभारत स्वतंत्रता के उपरान्त सन् 1952 की रचना है. कृष्णायन में कृष्ण जन्म से लेकर कृष्ण की मृत्यु तक की सभी घटनाओं समाहित हैं तो जयभारत में कौरव पाण्डवों के आख्यान को प्रस्तुत करने का प्रयास किया है.

" कृष्णायन " के कथानक को रामचरित मानस की तरह कवि ने सात खण्डों, अवतरण काण्ड, मथुराकाण्ड, द्वारका काण्ड, पूजा काण्ड, गीता

काण्ड, जय काण्ड और आरोहण काण्ड में विभक्त किया है. इन सात काण्डों में कृष्ण जन्म, कृष्ण का नंद गाँव में पलना, अपने अद्भुत पराक्रम से पूतना, शकटासुर, बकासुर आदि का संहार, वृषभानु राधिका से प्रेम क्रीड़ा, कालीदह, दावाग्निशमन, गोवर्धन धारण, कंस की कुटिल योजनाएँ विफल बनाते हुए कुबलयापीड़, मुष्टिक, चाणूर एवं कंस का वध, सान्दीपनि ऋषि के आश्रम में शिक्षा एवं गुरु दक्षिणा के रूप में गुरु पुत्र को यमलोक से लाकर देना, जरासन्ध का मथुरा घेरना, कृष्ण का योगदान द्वारा द्वारिका पहुँचा एवं एक समृद्ध आर्य साम्राज्य की स्थापना करना है. इसके उपरान्त की घटनाओं में पांडवों को आधा राज्य दिलाना, अभिमन्यु का जातकर्मकरना, युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में सम्मिलित होने इन्द्रप्रस्थ में पहुँच कर विरोधी जरासन्ध एवं शिशुपाल का वध, द्रौपदी की रक्षा, कौरवों पांडवों में समझौता कराने में असफलता, गीता का उपदेश, कृष्ण चतुराई से भीष्म की पराजय, चक्रव्यूह रचना एवं अभिमन्यु की मृत्यु, युधिष्ठिर का राजा बनना, अश्वमेध यज्ञ, द्वारिका लौटते हुए सुदामा का दारिद्रय दूर करना, द्वारिका को पाण्डवों को देकर वन को प्रस्थान जहाँ एक लुब्धक के वाण से घायल होकर भौतिक शरीर त्याग ने की घटनायें ही प्रधान हैं.

" जयभारत " में भी कवि ने महाभारत की सम्पूर्ण वर्णन राजा नहुष के वृत्त से लेकर यदु कुरु वंशों के वर्णन, कौरव पाण्डवों के जन्म से लेकर स्वर्गारोहण तक की समस्त घटनाओं और प्रसंगों को स्थान दिया है. कवि ने नल दमयन्ती, सत्यावन- सावित्री, शकुन्तला- दुष्यन्त आदि के मनोरम उपाख्यानों को छोड़ दिया है ।

समीक्षा

ये दोनों ही वृहद् प्रबंध काव्य महाभारत की कथा को समेटे हुए हैं. नवीनता नाम की कोई वस्तु दृष्टिगोचर नहीं होती. " महाभारत " के

विशाल कथानक को जयभारत के रूप में महाकाव्योचित गरिमा प्रदान कराने में गुप्त जी की प्रबन्ध क्षमता वास्तव में सराहनीय है. तथ्य वर्णन की दृष्टि से कवि की कला अत्यधिक निखरी प्रतीत होती है. कवि ने आवश्यकता का ग्रहण और अनावश्यक का त्याग बड़े कौशल से किया है. समष्टि रूप में " जयभारत " के कथानक में पौराणिक उपलब्धियाँ हैं. इसमें धारावाहिता का एक सीमा तक अभाव होते हुए भी कथानक की सम्पूर्ण अन्विति प्रसंगगत सुसम्बद्धता के कारण अक्षुण्ण रही है. कवि ने इसके कथानक को युद्ध अंत तक ही समाप्त न कर, स्वर्गारोहण प्रकरण तक पहुँचाकर अंतिम सर्ग को विशेष ढंग से प्रतिपादित कर कथा के उपसंहार को भी पूर्ण गौरव के साथ अंकित किया है, किन्तु वीर रस की दृष्टि से यहाँ व्यवधान उपस्थित होता है.

" कृष्णायन " के रचयिता ने तुलसीदास के रामचरितमानस की शैली को अपनाये है. कृष्ण संबंधी पौराणिक कथाओं को लेकर कल्पना का अ सहारा लेकर इस प्रबंध काव्य को रचने का प्रयास किया है. यह रचना सांस्कृतिक पुनर्जागरण से प्रभावित प्रतीत होती है जैसाकि पूर्ववर्ती अध्यायों में हम स्पष्ट कर चुके हैं कि इन सांस्कृतिक पुनर्जागरण ने अतीत के प्रति मोह एवं श्रद्धा की जिस युग चेतना को जन्म दिया उसने कवियों को रचनायें करने की प्रेरणा दी. भारतीय जनमानस पर पौराणिक कथाओं का प्रभाव तथा उसके प्रति आकर्षण दीर्घकाल तक विद्यमान है और यह इस आकर्षण का ही प्रतिफलन है कि " जयभारत " एवं " कृष्णायन " जैसे प्रबंधकाव्य प्रकाश में आये हैं. प्राकृतिक दृश्यों के वर्णन भी दोनों ही प्रबंधों में हुए हैं. जैसा कि स्पष्ट है कि इनका वस्तु संगठन महाकाव्योचित नहीं है, अतः इन्हें वृहद प्रबंध कहा जा सकता है ।

चरित्र चित्रण

" कृष्णायन "एवं "जयभारत " दोनों का ही कथानक बड़ा व्यापक है एवं पात्रों की संख्या अधिक है. इसमें हम मुख्य पात्रों में युधिष्ठिर, कर्ण,

अर्जुन, द्रौपदी आदि चरित्र आते हैं. उनकी चरित्र सृष्टि परम्परानुसार है. जय भारत में काव्य का नायक उभर कर नहीं आता, किन्तु पराक्रम, धर्मशीलता एवं उदात्तता श्रेष्ठ पात्रों में समान देखते हुए महाभारत के इन पात्रों की समष्टि को नायक माना जा सकता है. कृष्णायन में कृष्ण का नायक होना स्पष्ट है जो वस्तुतः चरित काव्य की सरणि का है, किन्तु इसकी चरित्र सृष्टि में इसकी नवीनता विशेष रूप से उल्लेखनीय है. भागवत एवं महाभारत के कृष्ण चरित्र में जो वैषम्य दृष्टिगोचर होता है उसे कृष्णायनकार ने दूर करने का प्रयास किया है. गोपियों के प्रति कृष्ण का प्रेम सात्विक एवं सीमित है उसमें उच्छृंखलता नहीं है बल्कि लोक मंगल की भावना है. गोपी चीर हरण के समय कवि ने कृष्ण को एक समाज सुधारक के रूप में हमारे सामने रखा है. [125] इसी प्रकार राधा को प्रेमिका के रूप में चित्रित करने के बावजूद भी उसे कृष्ण की पूर्व जन्म की सहचरी बताकर उसके प्रेम बन्धन को समाज की मर्यादा के अनुरूप दिखाया है। [126]

कवि ने कृष्ण के चरित्र में शील, सौन्दर्य और शक्ति तीनों का रमणीय समन्वय किया है. इसके अतिरिक्त धर्म संस्थापक और राष्ट्रसेवा में निरत एक महान नेता के रूप में हमारे सामने आते हैं. इसके अतिरिक्त जयभारत एवं कृष्णायन में वे भक्तवत्सल के रूप में भी दृष्टिगोचर होते हैं. वास्तव में उनके चरित्र में आदर्शवाद का गहरा पुट है. कृष्ण के अतिरिक्त " जय भारत " की द्रौपदी में भी कवि ने नारीयोचित गरिमा का पुट दिया है. वह तेजस्वी, " आत्माभिमानी और समुन्नत शीलवती है. उसकी वक्तृता ओजस्वी है और स्वभाव प्रखर है. अपने इस गुण से वह पतियों को दासत्व के बंधन से मुक्त करा लेती है. अपनी प्रतिकार की भावना की अधिकता के कारण वह पतियों को उद्योगरत होने की प्रेरणा देती है. कुशाग्रबुद्धि वाली होने के कारण हर बार अपने सतीत्व कोबचाने में सफल होती है. इस प्रकार इसमें द्रौपदी भावनामयी, मानवती और कर्म प्रेरक शक्ति के रूप में दृष्टिगोचर होती है।

रस
==

" जय भारत " एवं " कृष्णायन " वीर रस युक्त काव्य हैं । इनमें अन्य रस रौद्र, श्रृंगार, वात्सल्य आदि सभी रस दृष्टिगोचर होते हैं परन्तु वीर रस का अपना ही सौन्दर्य है. जयभारत में युद्ध के चित्रण कम कथन अधिक हैं. यथा...

" दुःशासन का हृदय चीर कर उसका रक्त न पी जाऊँ
तो साक्षी दिक्काल, रहो तुम, मैं न वीर की गति पाऊँ,
दुर्योधन की जाँघ न तोड़ूँ,तो मैं अपना सिर फोड़ूँ,
यदि मैं कभी प्रतिज्ञा छोड़ूँ तो पितरों से मुँह मोड़ूँ ।
यहाँ हमारे होते कृष्णा जिनके कारण हुई अनाथ,
तुम सहदेव, अग्नि लाओ मैं अभी जला दूँ उनके हाथ । " 27

इसी प्रकार की उक्तियाँ अभिमन्यु, कर्ण आदि में भी दृष्टिगोचर होती हैं. भीम और दुर्योधन के युद्ध वर्णन में वीर रस का पूर्ण परिपाक हुआ है..

" घोर गदा युद्ध हुआ भीम दुर्योधन का ।
छाया भर छोड़ मानों रुण्डों पर मुण्डों की
दोनों गदा दण्डों पर लेकर उन्हें लड़े ।
आ- सा गया भूमण्डल पैंतरों में घिर के ।
घोर रव ही न उठा बजती गदाओं का,
दर्शकों की दृष्टि छूती छूटी चिनगारियाँ । " 28

यहाँ भीम आश्रय, दुर्योधन आलम्बन, दुर्योधन का गदा प्रहार, घोरख उठाना, चिनगारियों का छूटना उद्दीपन, भीम का गदा प्रहार अनुभाव, हर्ष, औत्सुक्य आदि संचारी भाव तथा विजय की कामना से पूर्ण उत्साह स्थायी भाव के कारण यहाँ वीर रस का संचार दिखाई देता है. इसी प्रकार यदि दुर्योधन को आश्रय और भीम को आलम्बन माना

जाय तो भीम की चेष्टाएँ अनुभाव एवं हर्ष, औत्सुक्य आदि संचारी भाव तथा विजय की कामना से पूर्ण उत्साह स्थायी भाव के कारण यहाँ वीर रस की पुष्टि होती है. कृष्णायन में भी मथुराकाण्ड, अर्जुन, कर्ण आदि पात्रों के माध्यम से वीर रस का पूर्ण परिपाक हुआ है. कृष्ण के असुरवध आदि कृत्यों तथा कौरव पाण्डव के युद्ध से संबंधित घटनाओं के वर्णन में वीर रस लक्षित होता है.

" भेदे कृपाचार्य रथ चाका, पतित भारद्वाज पताका ।
फाटेउ भूमिश्रवा-शरासन, मूर्च्छित छिन्न देह दुःशासन ।
विरथ द्रोण सुत विचरत पायन, आहत सौबल कीन्ह पलायन।
मर्माहत कुरुपति अंग अंगा, भागैलै रथ भीत तुरंगा ।
× × ×
पतितं सारथी साश्व, गिरी ध्वस्त क्षिति तल ज्वला ।
हत सब रक्षक पार्श्व, विफल विरथ राधा सुवन । " 129

समग्र मूल्यांकन

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि इस आलोच्य काल में आने वाले ऐतिहासिक, पौराणिक एवं बृहद् प्रबन्ध किसी न किसी रूप में सम सामयिक चेतना से जुड़े हुए हैं. तीन महाकाव्य तो राष्ट्रीय चेतना से प्रेरित लगते हैं और छः सांस्कृतिक पुनर्जागरण की चेतना से प्रेरणा पाकर लिखे गये हैं. स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व लिखे गये महाकाव्यों के विषय में यह उल्लेखनीय है कि इस समय क्रांतिकारियों के प्रयास हो रहे थे एवं कांग्रेस के प्रयत्न भी जारी थे जो अप्रत्यक्ष रूप से युगीन चेतना पर अपना प्रभाव डाल रहे थे. लोकमान्य तिलक, स्वामी दयानन्द सरस्वती आदि नेताओं ने देशवासियों को स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए देश के वीर चरित्रों की ओर देखने के लिए प्रेरित किया. कतिपय रचनाकारों ने तो क्रांतिकारियों के प्रयत्नों के माध्यम से स्वतंत्रता की चेतना को उभारा है और जगह-जगह यह भी स्पष्ट

करने का प्रयास किया है कि राज्य भिक्षा में माँग कर नहीं लिए जाते, वे तो वीरता से छीने एवं अर्जित किए जाते हैं. ये कवि गाँधीवादी नीति के पूर्णतः समर्थक प्रतीत नहीं होते ।

पौराणिक काव्य एवं वृहद प्रबन्ध जैसी रचनायें यद्यपि राष्ट्रीय चेतना से जुड़ी हुई प्रतीत नहीं होती तथापि वे कुछ अंश तक सांस्कृतिक पुनर्जागरण की चेतना से जुड़ी हुई प्रतीत होती है. आलोच्य युग में आने वाले पौराणिक महाकाव्यों के माध्यम से कवि ने यह स्पष्ट करने का प्रयास किया है कि कोई भी व्यक्ति अपने जाति वंश के माध्यम से ही श्रेष्ठ नहीं हो सकता बल्कि उसका कर्म ही उसे श्रेष्ठ बनाता है. महात्मा गाँधी, विनोबा भावे जैसे राष्ट्रीय नेताओं का भी यही प्रयास रहा है और यही कारण है कि आज जाति/या वंश के माध्यम से किसी व्यक्ति की श्रेष्ठता नहीं आँकी जा सकती बल्कि उनके कर्म को देखते हुए ही उनके महान या निम्न कोटि की संज्ञा दी जाती है. वृहद प्रबन्धों के माध्यम से भी कवियों ने कृष्ण जैसे ब्रह्म स्वरूप पात्र को भी एक साधारण समाज सुधारक के रूप में दिखाने का प्रयास किया है. ऐसी रचनाओं की संख्या अपेक्षाकृत कम है ।

प्रस्तुत अनुशीलन के सन्दर्भ में लेखिका का विनम्र मंतव्य है कि आधुनिक युग में जो लगभग तेरह महाकाव्य वीर काव्यों की कोटि में आते हैं, उनमें से श्री श्याम नारायण पाण्डेय तथा श्री कृष्ण सरल जैसे कृतिकारों के काव्यों को स्थान दिया गया है. वस्तुतः कवि विशेष को अध्ययन का आधार बनाने यही स्थिति संभाव्य है थी । यह अनुशीलन इस तथ्य को प्रकाशित करता है कि आधुनिक काव्य धारा में महाकाव्यों की कोटि की लगभग तेरह रचनाओं का अस्तित्व हिन्दी वीर काव्य परम्परा को एक सशक्त एवं महत्वपूर्ण काव्यधारा के रूप में स्थापित करता है. खण्ड काव्यों की संख्या इससे कही अधिक जिन पर परवर्ती अध्याय में विचार किया जायगा ।

संदर्भ सूची
=======

1. डॉ० भगीरथ मिश्र, काव्य मनीषा, प्रथम संस्करण - 1969, पृ. 148.
2. वही, पृ. 149
3. वही, पृ. 150.
4. वही, पृ. 151.
5. रामधारी सिंह " दिनकर ", अर्ध नारीश्वर, पृ. 46.
6. सर्ग बन्धो महाकाव्यं महतांच महच्चयत् ।
   अग्राम्यशब्दयर्थंच सालंकारं सदाश्रयम् ।।
   मंत्रदूत प्रयाणजिन नायकाभ्युदंयचत् ।
   पंचभि: सन्धिभिर्युक्तं नाति व्याख्यैयमृद्धिमत् ।।
   चतुर्वर्गाभिधानेपि भूयसार्थोवदेशकृत् ।
   मुक्तं लोकस्वाभावेन रसैश्च सकतै: पृथक् ।।
   नायकं प्रागुपन्नयस्य वंशवीर्यश्रुतादिभि: ।
   न तस्यैव वधं ब्रूयादन्योत्कर्षाभिधित्सया ।।
   यदि काव्य शरीरस्य न स व्यापितयेस्यते ।
   न चाभ्युदयभावूस्य मुधादौ ग्रहणास्तवै ।।
   -- भामह: काव्यालंकार : परि० 1, 19-23
7. दण्डी, काव्यादर्श, परि० 1- 14-20.
8. रूद्रट, काव्यालंकार, षोड्शोध्याय, 2,19.
9. हेमचन्द्र, काव्यानुशासन, अध्याय, 8-9.
10. विश्वनाथ, साहित्य दर्पण, षष्ठ परिच्छेद, पृ. 315-384.
11. इसी प्रकार मन में जब एक महत् व्यक्ति का उदय होता है, सहसा जब एक महापुरूष कवि के कल्पना राज्य पर अधिकार आ जमाता है, तब उसके उन्नत भावों से उद्दीप्त होकर, उस समय पुरूष की प्रतिमा प्रतिष्ठित करने के लिए, कवि भाषा का मंदिर निर्माण

करते हैं. उस मंदिर की भित्ती पृथ्वी के गंभीर अन्तदेश में रहती है, और उसका शिखर मेघों को भेदकर आकाश में उठता है. उस मंदिर में जो प्रतिमा प्रतिष्ठित होती है, उसके देव भाव से मुग्ध और उसकी पुण्य किरणों से अभिभूत होकर नाना दिग्देशों से आ- आकर लोग उसे प्रणाम करते हैं और इसी को कहते हैं महाकाव्य.... महाकाव्य में एक महच्चरित्र होना चाहिए, महदनुष्ठान होना चाहिए. महच्चरित्र का एक महत्कार्य, महदनुष्ठान होना चाहिए।

-- अनुवादक मधुप : मेघनाद वध : मतामत : पृ, 137-138.

12. डा० श्याम सुन्दरदास, साहित्यालोचन, 12 वां संस्करण 2014 वि० पृ. 24-25.
13. डा० गुलाबराय, काव्य के रूप, चतुर्थ संस्करण, पृ. 89.
14. डा० गोविन्दराम शर्मा, हिन्दी के आधुनिक महाकाव्य, पृ. 43.
15. मेघनाद वध, पृ. 139.
16. रामचन्द्र शुक्ल, जायसी ग्रन्थावली, भूमिका पृष्ठ
17. डा० नगेन्द्र, कामायनी के अध्ययन की समस्याएँ, द्वितीय संस्करण 1965, शीर्षक कामायनी का महाकाव्यत्व, पृ. 12.
18. अनुवादक गोपी कृष्ण गोपेश, विदेशों के महाकाव्य, भूमिका, पृ. 13.
19. Aristotle's Poetic: Dometrious P. 13.
20. Quoted by M. Dixon. English Epic & Heroic. Poetry - Page - 2.
21. I bid P. 18.
22. C. M Bowra. From Virgil to Milton P. I
23. Lascelles Aber crombire. The Epic Poetry Page - 41-42.
24. गुरुभक्त सिंह " भक्त ", विक्रमादित्य, प्रस्तावना.

25. विक्रमादित्य, पृ. 35.
26. वही, पृ. 96.
27. वेनी प्रसाद, हिन्दुस्तान की पुरानी सभ्यता, द्वितीय संस्करण 1950, पृ. 121.
28. वही, पृ . 201.
29. अशोक, पृ. 99.
30. वही, पृ. 120.
31. हल्दीघाटी, पृ. 65.
32. वही, पृ. 72.
33. वही, पृ. 87.
34. वही, पृ. 166.
35. वही, पृ. 32-33.
36. वही, पृ. 38.
37. वही, पृ. 43-44.
38. वही, पृ. 81.
39. वही, पृ. 121.
40. वही, पृ. 134.
41. वही, पृ. 123.
42. अपने विचारों को मैंने पृथ्वीराज की कहानी को बहाना बनाकर " आर्यावर्त " के रूप में आपके सामने रखने का प्रयत्न किया है. .... " यदि ज्वलन्त भारतीय आदर्श की तनिक सी झलक भी " आर्यावर्त " दे सकता तो इसमें सन्देह नहीं कि मेरा जीवन धन्य हो गया । "

    -- " आर्यावर्त ", पं. मोहनलाल महतो " वियोगी " पुनश्च : पंचम संस्करण 1951.
43. आर्यावर्त, पृ. 115.

44. आर्यावर्त, पृ. 56.
45. वही, पृ. 9.
46. वही, पृ. 115-116.
47. वही, पृ. 21.
48. वही, पृ. 22.
49. वही, पृ. 64-65.
50. वही,पृ. 77.
51. वही, पृ. 89.
52. वही, पृ. 98.
53. वही, पृ. 99.
54. वही, पृ. 89.
55. वही, पृ. 79.
56. वही, पृ. 11.
57. वही, पृ. 24.
58. वही. पृ. 100.
59. वही, पृ. 72.
60. वही, पृ. 53, 127.
61. जौहर, पृ. 179,128.
62. वही, पृ. 122.
63. वही, पृ. 74-75.
64. वही, पृ. 76-77.
65. वही, पृ. 6 अग्निकण.
66. जौहर पृ. 108-109.
67. वही, अग्निकण, पृ. 8.
68. वही, पृ. 9.
69. वही, पृ. 49.

70. जौहर (अग्निकण) पृ. 97.
71. वही, पृ. 51-52.
72. वही, पृ. 220.
73. वही, पृ. 146.
74. वही, पृ. 73.
75. वही, पृ. 75.
76. वही, पृ. 121.
77. लालधर त्रिपाठी, छत्रसाल, प्रथम संस्करण,-2012 वि0 प्रस्तावना, पृ. 5.
78. वही, पृ. 6.
79. छत्रसाल, पृ. 23.
80. वही, पृ. 89.
81. वही, पृ. 91.
82. वही, पृ. 137.
83. वही, पृ. 29.
84. झांसी की रानी, पहली हुंकार, पृ. 40.
85. वही, दूसरी हुंकार, पृ. 62.
86. वही, परिचय, पृ. 7.
87. वही, पहली हुंकार, पृ. 40.
88. वही, पाँचवी हुंकार, पृ. 80.
89. वही, बाईसवीं हुंकार, पृ. 294-295.
90. वही, इक्कीसवीं हुंकार, पृ. 264.
91. लक्ष्मी नारायण कुशवाहा, तात्याटोप, आमुख.
92. वही, पृ. 12 (चौथी आहुति).
93. वही, पृ. 34. (पाँचवी आहुति).
94. तात्याटोपे, आमुख.

95. तात्याटोपे, अट्ठाइसवीं आहुति, पृ. 209.
96. वही, पृ. 53, 46, 164, 189.
97. श्री कृष्ण सरल, सरदार भगतसिंह, पृ. 39.
98. भगतसिंह, विस्फोट, पृ. 11.
99. वही, तूफान और यौवन, पृ. 87.
100. वही, विस्फोट, पृ. 20.
101. सरदार भगतसिंह, सर्ग 1, पृ. 35.
102. वही, पृ. 41.
103. वही, पृ. 361.
104. वही, विस्फोट, पृ. 22.
105. वही, सर्ग- 1 पृ. 39.
106. वही सर्ग 11, पृ. 143.
107. वही. विस्फोट, पृ. 52.
108. वही, सर्ग 1 पृ. 42.
109. भगतसिंह, पृ. 30
110. वही, पृ. 31.
111. वही, पृ. 34.
112. वही, पृ. 67.
113. वही, पृ. 48 (रौलट बिल हाय ! हाय !)
114. वही, पृ . 158 (सांडर्स बध).
115. भगतसिंह, विस्फोट, पृ. 14.
116. अंगराज, भूमिका, पृ. 15.
117. डॉ० गोविन्द शर्मा, हिन्दी के आधुनिक महाकाव्य, पृ. 403
118. विस्तृत विवेचन के लिए देखिये--
डॉ० लालताप्रसाद सक्सेना - हिन्दी महाकाव्यों में
मनोवैज्ञानिक तत्व, पृ. 118.

119. अंगराज, भूमिका, पृ. 14.
120. वही, सर्ग 21, पृ. 2.
121. वही, पृ. 2.
122. रावण, त्रयोदश सर्ग, पृ. 135.
123. डॉ० लालताप्रसाद सक्सेना, हिन्दी महाकाव्यों में मनोवैज्ञानिक तत्व, पृ. 118.
124. दिनकर, रश्मिरथी, भूमिका, पृ. ग- घ.
125. कृष्णायन, अवतरण काण्ड, दोहा- 113.
126. वही, दोहा-88.
127. जयभारत, पृ. 147-48.
128. वही, पृ. 404.
129. कृष्णायन, जयभारत, 130 दोहा.